संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

हिन्दी

वर्ष : १०
अंक : ८७
मार्च २०००

होली-१९ मार्च
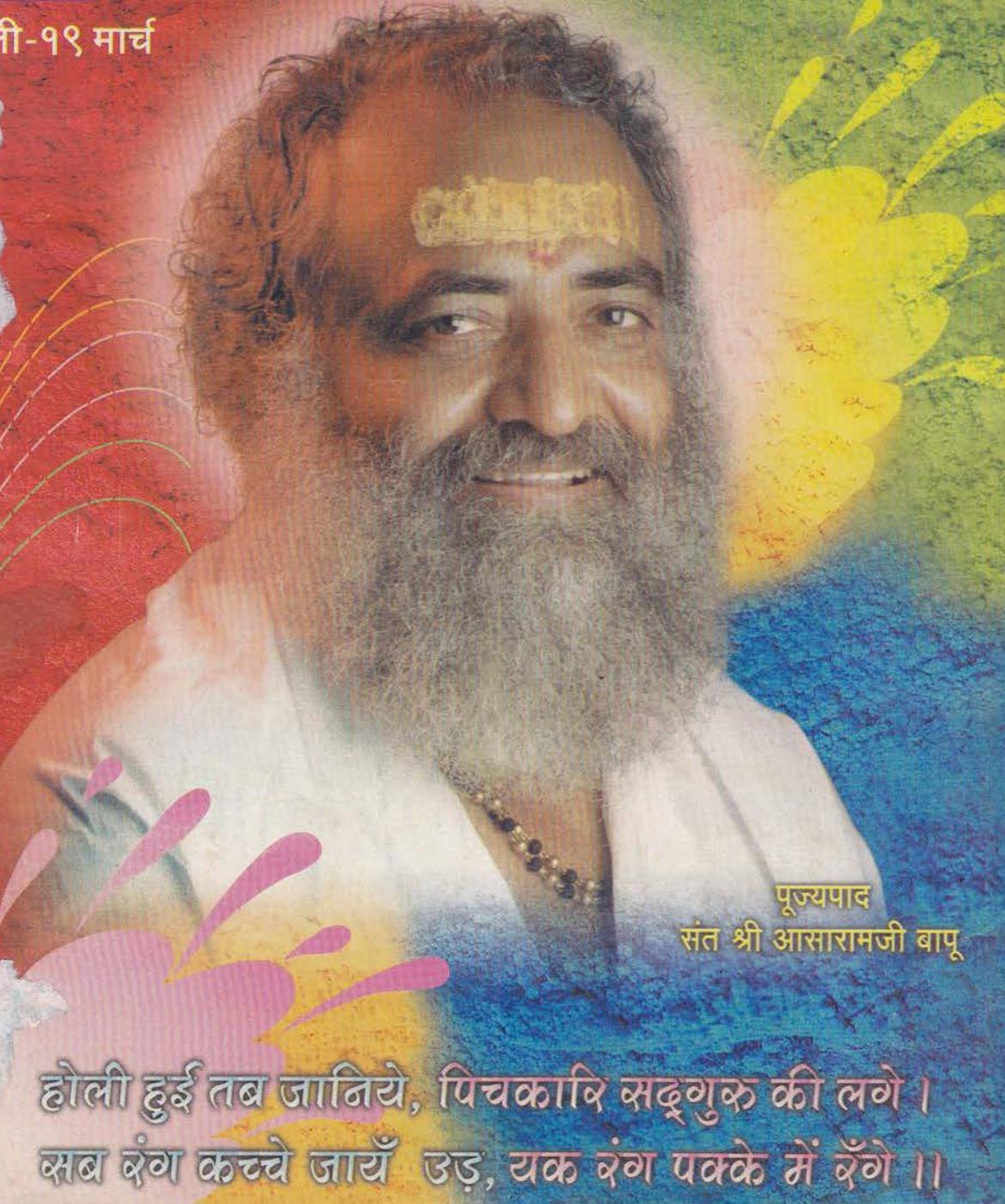
पूज्यपाद
संत श्री आसारामजी बापू

होली हुई तब जानिये, पिचकारि सद्गुरु की लगे ।
सब रंग कच्चे जायँ उड़, यक रंग पक्के में रँगे ।।

वर्ष : १०
अंक : ८७
९ मार्च २०००

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

नेपाल व भूटान में

(१) वार्षिक : रू. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रू. ३००/-
(३) आजीवन : रू. ७५०/-
(डाक खर्च में वृद्धि के कारण)

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं विनय प्रिन्टिंग प्रेस, अमदावाद में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

होली मेरे सद्गुरु की

होली तो हर साल है आती, रंगों की बरसात है लाती।
इस होली का रंग है निराला, समझे कोई किस्मतवाला॥
रंग गुलाल उड़ाओ... होली मेरे सद्गुरु की०
गुरु ने ऐसा रंग चढ़ाया, रंग चढ़ाया रंग चढ़ाया।
जिसे चढ़ा उसे अहं न आया, इस रंग में सब रँग जाओ॥
रंग गुलाल उड़ाओ... होली मेरे सद्गुरु की०
हम सब हैं उस गुरु के प्यारे, आन बसे जो दिल में हमारे।
मिलजुलकर हमें रहना सिखाया, जात-पाँत का भेद मिटाया॥
सारे प्रेम से गले लग जाओ... होली मेरे सद्गुरु की०
उसका खेल सबसे निराला, पिलाया हरिनाम का प्याला।
हाँ हाँ पिलाया हरिनाम का प्याला, हरि ॐ का प्याला॥
ऐसा रंग लगाया... होली मेरे सद्गुरु की०
जागने का अब समय है आया, काल ने अपना जाल फैलाया।
जो भी हरि का नाम जपेगा, भवसागर से वही तरेगा॥
मेरे सद्गुरु तारनहार... होली मेरे सद्गुरु की०

[डा. संजय मदान, रोहतक-हरियाणा।]

*

आओ मिल मंगल गान करें

आओ मिल मंगल गान करें,
'ऋषि प्रसाद' अभियान करें।
गुरुवर के इस दैवी कार्य का,
गाँव-गाँव में प्रचार करें॥१॥
गुरुज्ञान का दीप हाथ में,
समता का ध्वज लिये साथ में।
अज्ञान तिमिर का नाश करें,
आओ मिल मंगल गान करें॥२॥
उठो उठो रे जागो लोगों,
दीन-हीनता त्यागो लोगों।
प्रणव का निर्भय नाद करें,
आओ मिल मंगल गान करें॥३॥
'ऋषि प्रसाद' है ये सिखलाता,
हम सबका है एक विधाता।
उसका हम नित ध्यान करें,
आओ मिल मंगल गान करें॥४॥
वेदों का अमृत बरसाता,
सर्व में एक ब्रह्म दिखलाता।
भेद-भाव को दूर करें,
आओ मिल मंगल गान करें॥५॥
ऋषियों के उस दिव्य ज्ञान का,
भारत की संस्कृति महान् का।
हम सब मिल गुणगान करें,
आओ मिल मंगल गान करें॥६॥

[प्रदीप काशीकर व डॉ. शरद गोयल, अमदावाद।]

*

गुरुदेव से है प्रार्थना...

गुरुदेव से है प्रार्थना,
आनन्दमय संसार हो।
'मैं' अरु 'मेरा' ना रहे,
बस तू ही तू एक नाम हो॥
भेदभाव तज दें जगत के,
जाती रहे तुच्छ भावना।
सब प्रेम से पूजा करें नित,
उर में उदय ब्रह्मज्ञान हो॥
गुरुदेव कृपा कर दो ये हम पर,
सर्वात्मभाव उपजा करे।
तज जाति-पंथ सब भाषा-भेद,
मन आत्मभाव में रमण करे॥
शत्रु-मित्र सज्जन-दुर्जन में,
एक तेरा ही दरश करें।
वर दो हमारे मनमंदिर में,
नित तेरा ही ध्यान हो॥
राम कृष्ण शिव अरु शक्ति के,
तुझमें ही हम दरश करें।
सेवा में तेरे चरणों की,
हम भक्तों की शाम हो॥

[दीपक 'बाँकी', अमदावाद।]

ज्ञान की सात भूमिकाएँ

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

[गतांक का शेष]

जैसे, किसीने हवाई जहाज का टिकट लिया है और बीच में जहाज बिगड़ जाता है तो उसे होटल में ठहरना पड़ता है। उस हवाई जहाज की कंपनी होटल में उसके रहने-खाने का पूरा खर्च उठाती है, मुसाफ़िर को खर्च नहीं करना पड़ता। ऐसे ही तीसरी भूमिका में पहुँचे हुए साधक को ब्रह्मज्ञान पाने का टिकट उपलब्ध हो जाता है। लेकिन यदि बीच में ही उसका शरीर शांत हो जाये तो अन्य पुण्यात्माओं की नाईं पुण्यलोक में उसकी गति होती है। उसके पुण्य नष्ट नहीं होते हैं। अगर उसको रुचि रहती है तो वह ब्रह्मलोक में ब्रह्माजी के साथ निवास करता है और जब महाप्रलय होता है तब ब्रह्माजी के उपदेश से ब्राह्मी स्थिति प्राप्त करके ब्रह्मरूप हो जाता है।

४. सत्त्वापत्ति : तीसरी भूमिका जब परिपक्व होती है तब चौथी भूमिका सत्त्वापत्ति आती है। उपरोक्त तीनों भूमिकाओं का अभ्यास करते हुए, इन्द्रियों के विषय और जगत से वैराग्य करते हुए श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन के द्वारा सत्य आत्मा में स्थित होने का नाम 'सत्त्वापत्ति' है। इस चौथी भूमिका में आत्म-साक्षात्कार हो जाता है। चौथी भूमिकावाले का चित्त कैसा होता है ? जैसे आम की डाल। आम की डाल पकड़कर नीचे झुकाई, उसमें से फल, पत्ते आदि तोड़े और डाल को छोड़ दिया तो डाल अपने मूल स्थान पर ऊपर पहुँच जाती है, ऐसे ही चौथी भूमिकावाला साधक व्यवहार में अपने मन को ले आयेगा, कथा सुनने-सुनाने में, बातों में ले आयेगा लेकिन एक क्षण में ही उसका चित्त पुनः अपने स्वरूप में चला जायेगा।

उठत-बैठत वही उटाने,
कहत कबीर हम उसी ठिकाने...

इस चौथी भूमिका में पहुँचकर सिद्ध हुआ साधक पुनः नीचे नहीं आता, पतित नहीं होता। उसमें जगत का मिथ्यात्व दृढ़ हो जाता है।

जैसे मनुष्य की स्मृति में जब उसका अपना नाम पक्का बैठ जाता है कि 'मैं गोविंद हूँ... मैं गोपाल हूँ...' तो फिर उसको कोई कहे कि 'तुम गोविंद नहीं हो... तुम गोपाल नहीं हो...' तब भी उसे संशय नहीं होता। ऐसे ही चौथी भूमिकावाले महापुरुष को 'मैं ब्रह्म हूँ...' यह ब्राह्मी अनुभूति पक्की हो जाती है। फिर ब्रह्माजी भी कहें कि 'तुम जीव हो... तुम ब्रह्म नहीं हो...' तब भी उन्हें संशय नहीं रहता। फिर राम, राम नहीं बचते... कृष्ण, कृष्ण नहीं बचते बल्कि अपना-आपा आत्मस्वरूप हो जाते हैं।

'श्रीरामचरितमानस' में आता है :

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई।
जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई॥
(अयोध्याकाण्ड : १२६, ३)

चौथी भूमिकावाला साधक देह में दिखता है लेकिन उसकी चेतना समस्त ब्रह्माण्डों में फैली हुई होती है। जैसे आप सेवफल से अलग हैं, वैसे ही वह देह में होते हुए भी देह से पृथक् होता है।

महावीर कहते हैं : ''जो दीन-दुःखियों की सेवा-परिचर्या करता है, वह मेरे ज्ञान को समझ सकता है। सेवा से अंतःकरण शुद्ध होता है तब पता चलता है कि हम शरीर नहीं हैं, शरीर से हम

पृथक् हैं।''

तुलसीदासजी कहते हैं :

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई।

वेदव्यासजी ने कहा है :

परोपकाराय पुण्याय...

नरसिंह मेहताजी ने भी कहा है :

वैष्णव जन तो तेने कहीए जे पीड पराई जाणे रे...

सब संतों का एक ही निचोड़ है। ऊँचाई पर जो पहुँचे हैं, उन सबमें एकवाक्यता है। हम कहते हैं कि 'हम जैनी हैं... हम वैष्णव हैं...' यह तो शुरूआत है। जब ऊँचे उठेंगे तब ये भेदभाव गायब हो जायेंगे। चौथी भूमिकावाले को 'महापुरुष' कहते हैं... 'ब्रह्मवेत्ता' कहते हैं। उनका पुनर्जन्म नहीं होता।

तीसरी भूमिकावाले साधक ब्रह्मलोक तक जाते हैं, उनका पुनर्जन्म हो सकता है किन्तु चौथी भूमिकावालों का जब शरीर शांत होता है तब उनका स्थूल शरीर स्थूल भूतों में, सूक्ष्म शरीर सूक्ष्म भूतों में और चेतना महाकाशस्वरूप ब्रह्माण्ड में फैल जाती है। वे हमें भी अपनी इच्छा से, इच्छित लोकों में भेज सकते हैं। ज्ञानी प्रकृति से पार हो जाते हैं।

वे जीवन्मुक्त महापुरुष सुख में सुखी, दुःख में दुःखी नहीं होते हैं। वे अपने प्राकृत आचार को करें या न करें, उन्हें कोई बंधन नहीं होता। ज्ञानवान् कैसे होते हैं ? इसके बारे में शास्त्रों में बहुत कुछ कहा गया है, फिर भी लिखनेवालों ने अंत में यही लिखा है कि ज्ञानी का अनुभव ज्ञानी जाने। एक ज्ञानी का जीवनचरित्र, स्वभाव एवं व्यवहार जरूरी नहीं कि दूसरे ज्ञानी से मिलता-जुलता हो लेकिन एक ज्ञानी का अनुभव दूसरे ज्ञानी के अनुभव से मेल खाता है।

शुकः त्यागी कृष्ण भोगी जनकराघवनरेन्द्राः।
वशिष्ठः कर्मनिष्ठश्च सर्वेषां ज्ञानीनां समान मुक्ताः॥

(क्रमशः)

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ८९ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया मार्च २००० के अंत तक अपना नया पता भिजवा दें।

भगवान का अनुभव कैसे ?

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

परमात्मा कैसा है ? आत्मा का स्वरूप क्या है ? कोई कहता है कि भगवान तो मोरमुकुटधारी हैं। कोई कहता है कि भगवान तो मर्यादापुरुषोत्तम हैं। कोई कहता है कि भगवान सर्वगुणसंपन्न हैं। कोई कहता है कि भगवान सर्वशक्तिमान् हैं। कोई कहता है कि भगवान सर्वत्र हैं। कोई कहता है कि वे वैकुण्ठ, कैलास आदि में हैं। कोई कहता है कि भगवान हमारे हृदय में बैठे हैं। कोई कहता है कि कण-कण में भगवान हैं। कोई कहता है कि नहीं... यह सब माया का पसारा है। भगवान तो निर्गुण- निराकार हैं।

कोई कहता है : ''नहीं... निर्गुण-निराकार तुम्हारी दृष्टि में होगा। हम तो साकार भगवान को पूजते हैं। मुरलीमनोहर, मोरमुकुट एवं पीतांबरधारी जो हैं, वे ही हमारे भगवान हैं। उनको हम सुबह बालभोग, दोपहर को राजभोग एवं शाम को भी भोग लगाकर ही खाते हैं। हमारे भगवान के दर्शन करने हों तो चलो, हम तुम्हें करवाते हैं।''

पूछो : ''कहाँ हैं भगवान ?''

कहेंगे : ''चलो हमारे साथ।''

ले जायेंगे पूजा के कमरे में। हटायेंगे पर्दा और कहेंगे : ''ये हैं हमारे भगवान।''

इस प्रकार कोई कहता है कि भगवान स्थान-विशेष में हैं तो कोई कहता है वे सर्वत्र हैं। कोई

कहता है वे सर्वगुणसंपन्न हैं तो कोई कहता है गुणातीत हैं। कोई कहता है वे साकार हैं तो कोई कहता है निराकार हैं। अब हम भगवान श्रीकृष्ण के पास चलते हैं और देखते हैं कि वे क्या कहते हैं। भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं :

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-
माश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः।
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति
श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् ॥

'कोई एक महापुरुष ही इस आत्मा को आश्चर्य की भाँति देखता है और वैसे ही दूसरा कोई महापुरुष ही (इसके तत्त्व का) आश्चर्य की भाँति वर्णन करता है तथा दूसरा कोई (अधिकारी पुरुष) ही इस आत्मा को आश्चर्य की तरह सुनता है और कोई-कोई तो सुनकर भी इसको (आत्मा को) नहीं जानता।' (गीता : २.२९)

कोई व्यक्ति भगवान को आश्चर्य की भाँति देखता है कि : ''आहाहा... हमने भगवान की छवि देखी ! आज रात को मुझे ऐसा स्वप्न आया था कि 'मोरमुकुटधारी भगवान मेरे सामने प्रकट हुए हैं और वे मुझसे पूछ रहे हैं कि, 'क्या हाल है ?' ...और मैं कह रहा हूँ कि, 'भगवन् ! आपकी कृपा है।' फिर उन्होंने बड़े प्रेम से मेरे सिर पर हाथ फेरा जिससे मैं तो गद्गद् हो गया !''

'कोई व्यक्ति भगवान को, आत्मा को आश्चर्य की भाँति देखता है...' इसका एक अर्थ ऐसा भी हो सकता है कि जैसे संसार की दूसरी चीजें देखने, सुनने, पढ़ने और जानने में आती हैं वैसे इस परमात्मा को नहीं जाना जा सकता, क्योंकि अन्य वस्तुएँ तो देह-इन्द्रिय-बुद्धि के द्वारा जानी जाती हैं जबकि परमात्मा को तो स्वयं अपने-आपसे ही जाना जाता है। इसीलिए कहा गया है :

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनम्...

कोई इसको आश्चर्य की तरह कहता है- **आश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः...** क्योंकि यह परमात्मतत्त्व वाणी का विषय नहीं है। जिससे वाणी प्रस्फुटित होती है, वाणी उसका वर्णन कैसे कर सकती है ? फिर भी भगवान के गुण-कर्म, लीला-स्वभाव आदि का वर्णन करके महापुरुष लोग वाणी से उनकी ओर केवल संकेत ही करते हैं ताकि सुननेवाले का लक्ष्य उधर हो जाये।

आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति...

कोई इस आत्मा को आश्चर्य की तरह सुनता है क्योंकि दूसरा जो कुछ भी सुनने में आता है वह सब इन्द्रियाँ, मन एवं बुद्धि का विषय होता है किन्तु परमात्मा न इन्द्रियों का विषय है, न मन का और न बुद्धि का, वरन् वह तो इन्द्रियादि सहित उनके विषयों को भी प्रकाशित करनेवाला है। इसलिये आत्मा (परमात्मा) सम्बन्धी विलक्षण बात को वह आश्चर्य की तरह सुनता है।

श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्।

'सुनकर भी इसको कोई नहीं जानता।'

इसका तात्पर्य यह कि केवल सुनकर इसको कोई भी नहीं जान सकता वरन् सुनने के बाद जब वह स्वयं उसमें स्थित होगा, तब वह अपने-आपसे ही अपने-आपको जानेगा।

श्रुतियाँ अनेक हैं, स्मृतियाँ अनेक हैं, पुराण भी अठारह हैं। इनमें जो जैसा पाता है, भगवान को ठीक वैसा-वैसा मानता है। हकीकत में अति विस्मयकारक बात और तथ्य यह है कि पशु से लेकर परम सूक्ष्म जीवाणुओं में भी वही आत्मा सूक्ष्म रूप से स्थित है। कोई उसे छोटा कहता है तो भी ठीक है और कोई उसे बड़ा कहता है तो भी ठीक है... कोई परमात्मा को सगुण-साकार कहता है तो भी ठीक है और कोई निर्गुण-निराकार कहता है तो भी ठीक है। येन-केन-प्रकारेण वह अपनी बुद्धि को भगवान में तो लगा रहा है... इस बात से हमें आनंद है। बस, हमारा यही एकमात्र कर्त्तव्य है कि हम अपनी बुद्धि को परमात्मा में प्रतिष्ठित करें।

इस युग में अधिकांश लोग विषयपरायण हो चले हैं। विषय-भोगों में वे इतने लिप्त हो गये हैं कि जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। उस

परमात्मा के विषय में जानना तो दूर, विचार तक नहीं करते। वह आत्म-परमात्मतत्त्व इतना सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है और महान् से भी महान् है कि हम उसकी कल्पना तक नहीं कर सकते। **कीड़ी के पग नेवर बाजे सो वह भी साहिब सुनत हैं...** इतना वह सूक्ष्म है। हमारे बोलने-चालने एवं हिलने-डुलने से कितने ही जीवाणु मर जाते हैं। वैज्ञानिक लोगों का कहना है कि जब हम बोलते हैं तब असंख्य जीवाणु मर जाते हैं। इस हाथ को उठाने एवं नीचे लाने में भी न जाने कितने ही सूक्ष्म-से-सूक्ष्म जीवाणु मर जाते होंगे ! क्षण-क्षण में लाखों-करोड़ों जीवाणु उत्पन्न होते एवं मरते रहते हैं। इस शरीर में भी असंख्य बैक्टीरिया उत्पन्न होते एवं मरते रहते हैं जो कि 'माइक्रोस्कोप' (सूक्ष्मदर्शी यंत्र) से देखने में आते हैं। इतने वे सूक्ष्म हैं ! जब वे जीवाणु इतने सूक्ष्म हैं तो उनका हृदय कितना सूक्ष्म होगा और उस हृदय में बैठा हुआ भगवान कितना सूक्ष्म होगा, कितना छोटा होगा ! बाल के अग्रभाग के एक लाख हिस्से करो। उसमें से एक हिस्से पर भी हजार बैक्टीरिया (जीवाणु) बैठे होते हैं और उनमें भी भगवान की चैतन्यता मौजूद होती है। आप सोचिये कि भगवान कितने समर्थ और व्यापक हैं ! किन्तु हम अल्पज्ञ हो गये हैं, उच्छृंखल हो गये हैं इसीलिये आत्ममहिमा से दूर हैं। एक फकीर ने कहा है :

अल्ला रे अल्ला ! क्या फ़ैज़ है मेरे साकी का !
अपने हिस्से की भी वे मुझे पिलाए जाते हैं ॥

अर्थात् भगवान कैसे हैं ? शांति के महासागर... आनंद के महास्रोत... वे अपने हिस्से की शांति, आनंद, माधुर्य आदि का हमें अनुभव करवा रहे हैं फिर भी हम उन्हें दूर मानते हैं। हम उन्हें किसी अवस्था-विशेष अथवा स्थान-विशेष में मानते हैं जो हमारी बड़ी भारी भूल है, गलती है। इससे हमारी श्रद्धा और विश्वास डावाँडोल हो जाते हैं, चित्त में संशय हो जाता है और **संशयात्मा विनश्यति।**

जहाँ संशय होता है वहाँ विनाश हुआ समझो। भगवान को जब-जब केवल आकाश-पाताल में मानेंगे, किसी मंदिर-मस्जिद-गिरिजाघर- गुरुद्वारे में मानेंगे या किसी अवस्था-विशेष अथवा स्थान-विशेष में मानेंगे, जैसे कि 'फलानी जगह जायेंगे तब भगवान मिलेंगे... फलानी अवस्था आयेगी तब भगवान मिलेंगे... ऐसा-ऐसा करेंगे तब भगवान मिलेंगे...' तब-तब भगवान दूर हो जायेंगे। हैं तो भगवान निकट से भी निकट, लेकिन दूर मानने से दूर हो गये और जिसने भगवान को निकट समझा, अपने हृदय में स्थित समझा उसके भीतर भगवान ने शांतिरूप से, आनंदरूप से, और भी पता नहीं किस-किस रूप से, जिसका वर्णन नहीं हो सकता ऐसे अवर्णनीय ढंग से अपने अस्तित्व का एहसास कराया, अनुभूति करायी और अपना प्रकाश फैलाया।

भगवान को न तो किसी अवस्था-विशेष में मानना है और न ही किसी स्थल-विशेष में मानना है। वह तो सर्वत्र है, सदा है और सबके पास है। वह सबका अपना-आपा होकर बैठा है।

कोई जिज्ञासु यहाँ प्रश्न उठा सकता है कि : 'जब भगवान सर्वत्र है, सदा है, हमारे ही भीतर है तो फिर संतों के पास, सद्गुरु के पास जाने की क्या जरूरत ? सत्संग सुनने की क्या जरूरत ?'

जैसे, यहाँ आपके व मेरे पास रेडियो एवं टेलिविजन की तरंगें हैं, फिर भी हमें सुनाई-दिखाई नहीं देतीं। क्यों ? क्योंकि इस समय यहाँ पर रेडियो या टेलिविजन नहीं है, रेडियो का एरियल नहीं है, टी.वी. की 'एन्टीना' नहीं है। हमारे पास ये साधन-सामग्रियाँ होंगी तभी हम रेडियो भी सुन पायेंगे और टी.वी. भी देख पायेंगे। ठीक इसी प्रकार भगवान सर्वत्र हैं। रेडियो और टी.वी. की तरंगें जितनी व्यापक होती हैं उससे भी कहीं ज्यादा व्यापक भगवान की सत्ता है लेकिन उसकी अनुभूति, उसका लाभ संतों-सद्गुरुओं की कृपा से ही मिलता है क्योंकि संतों के हृदय में ही भगवान ने अपना प्रादुर्भाव कर रखा है।

संतों ने अपने हृदय में 'एन्टीना' लगा रखा है। इस एन्टीना से उन्हें भगवान के दर्शन हुए हैं

और उसकी महिमा का वे वर्णन भी कर सकते हैं। इसीलिए हम संतों के सान्निध्य की अपेक्षा रखते हैं। जैसे, इस पृथ्वी के वायुमंडल में रेडियो और टी.वी. की तरंगों के सर्वत्र व्याप्त होने पर भी बिना टी.वी. व रेडियो के उन्हें देखना और सुनना कठिन है, ठीक इसी प्रकार भगवान की सर्वव्यापकता होने के बावजूद भी उनके आनंद, उनकी शांति, उनके माधुर्य का अनुभव बिना सद्गुरु व सत्संग के करना कठिन है। यह अनुभव तो केवल संतों के सान्निध्य एवं सत्संग से ही प्राप्त किया जा सकता है।

ठीक ही कहा है :

कर नसीबांवाले सत्संग दो घड़ियाँ...

अहंकारी, मनमुख और दूसरों के यशो-तेज से उद्विग्न निंदकों के लिए नानकजी ने कहा है :

संत कै दूखनि आरजा घटै।
संत कै दूखनि जम ते नहीं छुटै ॥
संत कै दूखनि सुखु सभु जाइ।
संत कै दूखनि नरक माहि पाइ ॥
संत कै दूखनि मति होइ मलीन।
संत कै दूखनि सोभा ते हीन ॥
संत के हते कउ रखै न कोई।
संत कै दूखनि थान भ्रसटु होई ॥
संत कृपाल कृपा जे करैं।
'नानक' संत संगि निंदकु भी तरै ॥

निंदकों की बातों में न आनेवाले सत्संगी तो फायदा उठाते हैं। दृढ़निश्चयी पुण्यात्मा शिष्यों-साधकों-भक्तों के लिए मानों नानकजी कह रहे हैं :

साध कै संगि मुख ऊजल होत ॥
साध संगि मलु सगली खोत ॥
साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥
साध कै संगि प्रगटै सु गिआनु ॥
साध कै संगि बुझै प्रभु नेरा।
साध कै संगि पाए नाम रतनु।
साध कै संगि एक ऊपरि जतनु ॥
साध की महिमा बरनै कउनु प्रानी।
नानक ! साध की सोभा प्रभ माहि समानी ॥

*

साधक सिद्ध कैसे बने ?

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

साधारण से दिखनेवाले मनुष्य में इतनी शक्तियाँ छुपी हुई हैं कि वह हजारों जन्मों के कर्मबंधनों और पाप-तापों को काटकर अपने अजन्मा, अमर आत्मा में प्रतिष्ठित हो सकता है। मनुष्य तो क्या, यक्ष, गंधर्व, किन्नर एवं देवता भी उसका दर्शन पाकर तथा यशोगान करके अपना भाग्य बनाने लगें- ऐसा खजाना मनुष्य के भीतर छुपा हुआ है। महान् होने की इतनी सम्भावनाओं के रहते हुए भी मानव बहिर्मुख होने के कारण पशु की नाईं जीवन जीता है, व्यर्थ के तुच्छ भोग-विलास में ही अपना अमूल्य जीवन बिता देता है और अंत में अतृप्ति के कारण निराश होकर मर जाता है। व्यर्थ की चर्चा करने, बोलने, विचारने तथा मनोरथ गढ़ने में ही भोला मनुष्य अपनी आन्तरिक शक्तियों का ह्रास कर डालता है।

...किन्तु साधक का जीवन संसारियों के जीवन से भिन्न होता है। संसारी लोगों की बातों में लोभ-मोह-अहंकार का पुट होता है लेकिन साधक के चित्त में निर्मलता, निर्मोहिता, निर्भीकता एवं निरहंकारिता की सुवास होती है। संसारी मनुष्य नश्वर सुख-भोग की वस्तुओं का संग्रह करके इन्द्रियजन्य सुखों को भोगने को उत्सुक होता है जबकि साधक संसार के नश्वर सुख-भोग

की वस्तुओं की अपेक्षा न करके अंतर्मुख होकर, आत्मानंद को पाने के महान् रास्ते पर चलता है। संसारी मनुष्य किसीकी निंदा-स्तुति करके तो किसीमें राग-द्वेष करके अपने चित्त को मलिनता की खाई में डालता है, जबकि साधक निंदा-स्तुति, मान-अपमान और राग-द्वेष को चित्त की वृत्तियों का खिलवाड़ समझकर अपने भीतर ही आत्मा में गोता मारने का प्रयास करता है। अपने स्वरूप को स्नेह करते-करते साधक निजानंद-स्वभाव में तृप्त होने को उत्सुक होता है जबकि निगुरा मनुष्य निजानंद-स्वभाव से बेखबर होकर विकारों के जाल में फँसा रहता है।

इसीलिए उन्नति चाहनेवाले संयमी साधक को विकारी जीवन बितानेवाले संसारी लोगों से मिलने में घाटा-ही-घाटा है जबकि परमात्मप्राप्त महापुरुषों का सान्निध्य उसके जीवन में उत्साह और आनंद भरने में बड़ा सहायक सिद्ध होता है। सत्यस्वरूप परमात्मा में रमण करनेवाले उन आत्मारामी सत्पुरुषों के श्रीचरणों में जाकर साधक आत्मधन की संपत्ति हासिल कर सकता है लेकिन जब वह असावधानी से संसारियों एवं विकारियों के बीच में पड़ जाता है, उनके संपर्क में आने लगता है तो वह अपनी ध्यान और धारणा की शक्ति का ह्रास कर लेता है, आध्यात्मिक ऊँचाइयों से फिसल पड़ता है। अगर कोई साधक इस शक्ति का संचय करते हुए अपनी आत्मा में प्रतिष्ठित होने तक उसे सावधानी से सँभालकर रखे तो वह साधक देर-सबेर एक दिन सिद्ध हो ही जाता है।

साधक के लिए एकान्तवास, धारणा-ध्यान का अभ्यास, ईश्वरप्रीति, शास्त्रविचार एवं महापुरुषों की संगति- ये सभी अनिवार्य शर्तें हैं।

एकान्त में विचरण करना, कुछ दिनों के लिए एक कमरे में अकेले ही मौन रहकर धारणा-ध्यान का अभ्यास करना साधना में सफलता पाने के लिये परम लाभकारी है। वेदान्त की बातें सुनकर भी जो एकान्तवास तथा ध्यान-धारणा की अवहेलना करता है उसके पास केवल कोरी बातें ही रह जाती हैं लेकिन जिन्होंने वेदान्त के वचनों को सुनकर एकान्त में उनका मनन करते हुए निदिध्यासन की भूमिका हासिल की है वे साधक सिद्धि को प्राप्त हो जाते हैं।

व्यर्थ का बोलना, सुनना एवं देखना साधक पसंद नहीं करता क्योंकि व्यर्थ का बोलने एवं जोर से बोलने से प्राणशक्ति, मनःशक्ति तथा एकाग्रता की शक्ति क्षीण होती है। व्यर्थ का देखने से चित्त में कुसंस्कार घुस जाते हैं और व्यर्थ का सुनने से चित्त मलिन हो जाता है। अतः उन्नति के चाहक को चाहिए कि वह व्यर्थ का देख-सुनकर अपनी शक्ति को क्षीण होने से बचाये।

साधक उचित आहार-विहार से अपना सत्त्वगुण संजोये रखता है। सत्त्वगुण की रक्षा करना उसका परम कर्त्तव्य बन जाता है। उसे फिर ज्ञान बढ़ाने के लिए किसी शास्त्र की आवश्यकता नहीं पड़ती वरन् सत्त्वगुण बढ़ते ही साधक में ज्ञान अपने-आप प्रगट होने लगता है।

सत्त्वात्संजायते ज्ञानम्...

जैसे लोभी धन को सँभालता है, अहंकारी कुर्सी को सँभालता है, मोही कुटुम्बियों को सँभालता है ठीक ऐसे ही साधक अपने चित्त को चंचल, क्षीण एवं उग्र होने से बचाता है। जिन कारणों से चित्त में क्षोभ पैदा होता है, जिन कारणों से चिन्ता और भय बढ़ते हैं ऐसे क्रिया-कलापों से साधक सदैव सावधान रहता है। अगर इस प्रकार की परिस्थिति बलात् आ भी जाये तो साधक शांति से जप-ध्यान, शास्त्राध्ययन आदि का आश्रय लेकर विक्षेप उत्पन्न करनेवाले उन क्रिया-कलापों एवं विचारों से अपने को मुक्त कर लेता है।

साधक को चाहिए कि वह अपने-आपका मित्र बन जाये। अगर साधक परमात्मप्राप्ति के लिए सजग रहकर आध्यात्मिक यात्रा करता रहता है तो वह अपने-आपका मित्र है और अगर वह अनात्म पदार्थों में, संसार के क्षणभंगुर भोगों में ही

अपना समय बरबाद कर देता है तो वह अपने-आपका शत्रु हो जाता है।

उच्च कोटि का साधक जानता है कि :

चातक मीन पतंग जब, पिया बिन ना रह पाय ।
साध्य को पाये बिना, साधक क्यों रह जाय ?

बुद्धिमान् साधक समझता है कि उसका लक्ष्य आत्मज्ञान पाना है और इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए जीवन में थोड़ी-बहुत दृढ़ता जरूरी है। जो लोग दूसरों को खुश करने में, मित्रों को रिझाने में या वाहवाही में अपने लक्ष्य को ठोकर मार देते हैं, अपने परम कर्त्तव्य को भूल जाते हैं वे फिर कहीं के नहीं रहते। मित्र या कुटुम्बीजन हमारा जितना समय खराब करते हैं, उतना शत्रु भी नहीं करते। अतः बुद्धिमान् साधक इस विषय में बड़ा सावधान रहता है ताकि उसका अमूल्य समय कहीं व्यर्थ की बातों में ही नष्ट न हो जाये।

इसलिये वह कभी-कभी मौनव्रत का अवलंबन ले लेता है जिससे उसकी जीवनशक्ति बिखरने से बच जाये। साधक मौन एवं एकांत-सेवन का जितना अधिक अवलंबन लेता है, उतनी ही उसकी दृढ़ता में बढ़ोतरी होती जाती है।

हे साधक ! तू अपनी दृढ़ता बढ़ा, धारणा-शक्ति बढ़ा। तुझमें ईश्वर का असीम बल छुपा है। परमात्मा तुझमें ज्ञानरूप से प्रकट होने की प्रतीक्षा कर रहा है। तेरे भीतर विश्वनियंता अपने पूर्ण बल, तेज, ओज, आनंद और प्रेमसहित प्रकट होना चाहता है। अतः हे साधक ! तू सावधान रहना। कहीं संसार के कँटीले मार्गों में उलझ न जाना। जीवनदाता से मुलाकात किये बिना ही कहीं जीवन की शाम न ढल जाये। अतः सावधान रहना, भैया !

जब संसार स्वप्न जैसा लगे, तब आंतरिक सुख की शुरुआत होती है। जब संसार मिथ्या भासित होने लगे, उसका चिंतन न हो, तब अंतःकरण में शांति व आराम प्रगट होने लगते हैं। जब चित्त अपने चैतन्यस्वरूप परम स्वभाव में तल्लीन होने लगे, तब आंतरिक आनंद प्रगट होने लगता है।

सारी मुसीबतें संसार को सत्य मानने एवं बहिर्मुख होने से ही आती हैं। अगर साधक अन्तर्मुख हो जाय तो उसे संसार स्वप्नवत् लगने लगे। अतः साधक को सदैव अन्तर्मुख होने का अभ्यास करना चाहिए। ऐसा करने से उसकी सारी व्याकुलताएँ, दुःख, शोक एवं चिन्ताएँ अपने आप गायब हो जायेंगी।

जो समय हमें परमात्मा को जानने में लगाना चाहिए, ज्ञान पाने में लगाना चाहिए, अंतर्मुख होने में लगाना चाहिए वही समय हम संसार की तुच्छ वस्तुओं, भोगों एवं बहिर्मुखता में लगा देते हैं, इसीलिए ईश्वरप्राप्ति में विफल हो जाते हैं।

संसार के प्रति आकर्षण का कारण है ईश्वर में श्रद्धा का अभाव एवं अंतर्मुख होने में लापरवाही। अगर साधक अंतर्मुख होता जाये तो उसका आत्मबल उत्तरोत्तर बढ़ता जाये और एक दिन उसके सारे दुःखों का अंत हो जाये। चाहे कैसा भी अपराध हो, बहुत बड़ा पाप हो, महा पाप हो, यदि आत्मज्ञान की कुंजी मिल जाये, अंतर्मुख होने की कला आ जाये तो पाप में इतनी ताकत ही नहीं कि उसके आगे टिक सके।

मौन, जप, उचित आहार-विहार, एकांत-सेवन एवं आत्मविचार अन्तर्मुखता लाने में अत्यंत सहायक सिद्ध होते हैं। जिन्होंने भी लोकसंपर्क से दूर रहकर अज्ञात स्थान में एकांतसेवन किया तथा अल्पाहार का आश्रय लिया, एकान्त में रहकर ध्यान और योग के बल से अपनी जीवनशक्ति को विकसित करके जीवनदाता को, नित्यज्ञान, नित्यप्रेम और नित्य आत्मसुख को पाने का प्रयत्न किया, वे ही महापुरुष हो गये। लेकिन जिन्होंने लोकसंपर्क का सतत सेवन किया और लोकेश्वर के लिये अंतर्मुख होना स्वीकार नहीं किया, उनके पास केवल कोरी बातें ही रह गयीं। जिन्होंने भी मन की वृत्तियों को बहिर्मुख करके उन्हें कल्पनाओं की धारा में बहाया, उन्होंने वास्तव में अपनी

जीवनशक्ति को क्षीण करने में ही समय गँवाया, अतः उनके जीवन में अँधेरा ही छाया रहा।

मदालसा, गार्गी, याज्ञवल्क्य आदि विभूतियाँ एकान्तसेवन तथा मौन का अवलंबन लेकर ही महान् बनीं। भगवान बुद्ध ने लगातार छः वर्ष तक जंगलों में अज्ञात रहकर कठोर साधना की और ध्यान-समाधि में तल्लीन रहे। आद्यशंकराचार्य के गुरु गोविन्दपादाचार्यजी भी नर्मदा तट पर स्थित ओंकारेश्वर में एक गुफा में सैकड़ों वर्षों तक समाधिस्थ रहे। आज तक जितने भी महापुरुष एवं महान् विभूतियाँ हुई हैं, उन्होंने अपने जीवन में मौन, एकांतसेवन, जप-ध्यान-धारणा एवं समाधि को ही महत्त्व दिया था। वे अपने निजस्वरूप में स्थित रहकर आत्ममस्ती में विचरते रहे।

रमण महर्षि ५३ वर्ष तक अरुणाचलम् में रहे। इस बीच उन्होंने अनेकों वर्ष एकान्त में एवं योगाभ्यास में व्यतीत किये तथा समाधि में वे निमग्न रहे।

उत्तरकाशी में कृष्णबोधआश्रम नामक महापुरुष ने अज्ञात व एकान्तसेवन कर साधनामय जीवन बिताया और बड़े प्रसिद्ध हो गये।

गंगोत्री में तपोवन स्वामी नामक एक विरक्त महात्मा ने गौमुख की बर्फीली पहाड़ियों पर जाकर एकान्तसेवन करते हुए अपनी धारणाशक्ति को विकसित किया और आत्मचिंतन की धारा में मन की वृत्तियों को प्रवाहित कर ब्रह्माकार वृत्ति प्रगट की।

श्रीरंग अवधूत महाराज ने लम्बे समय तक नर्मदा के किनारे अज्ञात रहकर एकांतसेवन किया तथा घास-फूस की कुटिया बनाकर वे ब्रह्माभ्यास को बढ़ाते रहे।

श्री अरविंद घोष जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति भी वर्षों तक एक कमरे में बंद रहे, अपने निवास से बाहर नहीं निकले। वे भी भारत के एक बड़े योगी के रूप में प्रसिद्ध हुए।

निलेश स्वामी ने नेपाल के जंगलों में एकांतसेवन कर आत्ममस्ती का लाभ लिया।

उत्तरकाशी और नैनीताल के भयानक अरण्यों में पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज भी वर्षों तक अज्ञात एकान्त में आत्मयात्रा करते हुए, निजानंद की मस्ती लूटते हुए विचरते रहे। आत्ममस्ती से सराबोर वे दिव्य महापुरुष हजारों-लाखों लोगों के बिखरे हुए जीवन को सँवारने तथा साधकों के जीवन को जीवनदाता की ओर अग्रसर करने में समर्थ हुए।

सभी संत महापुरुष एकान्त के बड़े प्रेमी होते हैं। जिनको एकान्त में परमात्मा का ध्यान करने की कला आ गयी, जिन्होंने एकाकी जीवन का मूल्य जाना है, वे व्यर्थ के सांसारिक झमेलों में पड़कर अपना आयुष्य बरबाद करना पसंद नहीं करते। ऐसे लोग व्यवहार में रहते हुए भी एकान्त में जाने को उत्सुक रहते हैं। और तो सब देव हैं लेकिन शिवजी महादेव हैं। उन्हें भी जब देखो तब एकान्त में समाधिस्थ रहते हैं।

हम आये थे अकेले, जायेंगे अकेले। रात को भी तो अकेले ही रहते हैं। जब इन्द्रियाँ और मन शांत होकर निद्राधीन होते हैं तभी शरीर की थकान मिटती है। इसी प्रकार अगर समय रहते हुए आत्मध्यान में तल्लीन होना सीख लें तो सदियों की थकान मिट सकती है।

उठो... कमर कसो। समय पल-पल करके बीता जा रहा है... मृत्यु नजदीक आ रही है। पुरुषार्थ करो। एकान्तवास करो। धारणा-ध्यान का अभ्यास तथा शास्त्रविचार एवं महापुरुषों की संगति करो और उस परम सुखस्वरूप परमात्मा को पाकर मुक्त हो जाओ। अतः सत्संग-कार्यक्रम माँगने का दुराग्रह न करो। हम भी अब एकान्त का समय बढ़ा रहे हैं।

*

प्रसाद पाते हुए बारताँडा के प्रभु...

टूटे दिलों को जोड़ने का उत्सव : होली

[होलिकोत्सव दिनांक : १९ मार्च २०००]

विषय-विकार एवं भोगवासना पर भक्ति-ज्ञान की विजय का उत्सव... स्वास्थ्य की सुरक्षा का उत्सव और पुराने राग-द्वेष को भूलकर, उसे आग में जलाकर पुनः अपना दिल जोड़ने का जो उत्सव है, वही होलिकोत्सव है।

इस होलिकोत्सव ने न जाने कितने ही टूटे हुए दिलों को जोड़ा है... कितने ही खिन्न मनों को प्रसन्न किया है... कितने ही अशांत-उद्विग्न चेहरों पर रौनक लाई है।

होली के दूसरे दिन आता है रंगों का त्यौहार-धुलेन्डी (फगुआ)। धूल पड़े उन विषयों पर, विकारों पर जो तुम्हें दुःखी और अशांत करते हैं, तुम्हारा अहंकार बढ़ाते हैं। धूल डालो अपने बाह्य पद-प्रतिष्ठा के अहंकार और बाह्य आडंबर पर। प्राकृतिक-नैसर्गिक जीवन जियो, सहज-सरल होकर जियो।

कुदरत के साथ और कुदरत के इन सपूतों के साथ स्नेहभरा व्यवहार करने की खबर देनेवाला जो उत्सव है वही है होली-धुलेन्डी का उत्सव।

धुलेन्डी के दिन हमारे देश के सैनिक भी अपने अधिकारियों पर बिना किसी हिचकिचाहट के रंग डालते हैं। छोटे ओहदेवाले हवलदार को उस दिन यह ग्रंथि नहीं होती कि 'मैं सैन्य विभाग का एक तुच्छ कर्मचारी मात्र हूँ...' और बड़े ओहदेवाले ब्रिगेडियर को भी उस दिन यह ग्रंथि नहीं रहती कि 'मैं सेना का एक बड़ा अधिकारी हूँ।' बड़े और छोटेपन की दीवार हटाकर प्रत्येक मनुष्य में जो एक चैतन्य लहरा रहा है उसको उभारने की प्रेरणा देनेवाला उत्सव है होली या धुलेन्डी का उत्सव।

आपके शरीर में कुछ ऐसे हानिकारक जीवाणु होते हैं जो आपके स्वास्थ्य को गड़बड़ कर देते हैं। ऐसे ही समाज में भी कुछ असामाजिक तत्त्व गड़बड़ी उत्पन्न कर देते हैं।

जो मानव समाज ईश्वर के नियमानुसार अर्थात् सृष्टि की तालबद्धता के अनुसार चलते हैं, ईश्वर की ओर चलते हैं, ऐसे समाज में सुख-शांति-आनंद और अमन-चैन होता है। लेकिन जब उसमें शराबी-कबाबी, प्रकृति के नियमों के विरुद्ध चलनेवाले, दुष्कर्म करनेवाले और जनता का शोषण करनेवाले लोग घुस जाते हैं तो समाज की रौनक बिगड़ जाती है, उसका आनंद और माधुर्य नष्ट हो जाता है।

ऐसे ही जब तक समाज पर संत-महात्माओं का, ऋषि-मुनियों का वर्चस्व था, तब तक इस होलिकोत्सव का बड़ा ऊँचा फायदा समाज को मिलता था। ऋषि-मुनियों एवं संतों के सान्निध्य में लोग ध्यान-भजन-जप-तप आदि करके बड़ा लाभ उठाते थे लेकिन जबसे हल्के स्वभाव के लोग समाज में बढ़ गये, महिलाओं के साथ छेड़खानियाँ करने लगे, अपनी कामुकता का बेशर्मिन्दगी के साथ प्रदर्शन करने लगे, शराब-भाँग पीने लगे, तबसे इस उत्सव का रूप बड़ा विकृत हो गया।

वैदिक काल में भी यह उत्सव मनाया जाता था। छोटे लोग इस उत्सव में ढोल-ढमक्का बजाकर दान-दक्षिणा प्राप्त करते थे। अच्छे लोग दान-पुण्य कर लेते थे एवं छोटी मति के लोग दान-दक्षिणा लेकर उत्सव मना लेते थे। किन्तु आज इस पवित्र उत्सव में नशा करके एक-दूसरे को बीभत्स गालियाँ देकर, रासायनिक रंगों का प्रयोग करके इस उत्सव का स्वरूप ही बिगाड़ दिया गया

है। हमें उचित है कि इस अवसर पर प्रभुगीत गायें और प्राकृतिक पुष्पों (टेसू के फूल आदि) का सात्त्विक रंग परस्पर एक-दूसरे को लगायें, रस्साखींच, लट्ठाखींच जैसे खेल खेलकर उमंग-उत्साह बढ़ायें। सात्त्विक रंग तन को तन्दुरुस्ती देंगे, सात्त्विक खेल मन को प्रसन्नता देंगे और प्रभु के गीत हृदय को पवित्र करेंगे।

गर्मी के दिनों में सूर्य की किरणें हमारी त्वचा पर सीधी पड़ती हैं जिससे शरीर में गर्मी बढ़ती है। हो सकता है कि शरीर में गर्मी बढ़ने से गुस्सा बढ़ जाये, स्वभाव में खिन्नता आ जाये। इसीलिए होली के दिन प्राकृतिक पुष्पों का रंग एकत्रित करके एक-दूसरे पर डाला जाता है ताकि हमारे शरीर की गर्मी सहन करने की क्षमता बढ़ जाये और सूर्य की तीक्ष्ण किरणों का उस पर विकृत असर न पड़े।

भारतीय संस्कृति के ये पावन त्यौहार एवं उनको मनाने के तरीके केवल मन की प्रसन्नता ही नहीं बढ़ाते, तन की तन्दुरुस्ती एवं बुद्धि में बुद्धिदाता की भी खबर देते हैं ताकि मानव स्वस्थ, प्रसन्न एवं आनंदित रहे तथा परम आनंदस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति की ओर अग्रसर होकर सब दुःखों से मुक्ति और परमानंद की प्राप्तिस्वरूप मोक्ष को भी पा ले।

होली अगर है खेलनी...

भारत पर्वों एवं त्यौहारों का देश है। भारतीय संस्कृति में हर्षोल्लास की भावना कूट-कूटकर भरी हुई है। हमारे दूरदर्शी ऋषियों ने अपनी सन्तानों को सनातन सत्य की ओर अग्रसर करने के लिए ऐसे पर्वों एवं त्यौहारों को धरोहर के रूप में दिया।

ऐसे ही त्यौहारों में होली का भी नाम आता है। प्रत्येक पर्व एवं त्यौहार के पीछे कोई-न-कोई ऐसी घटना अवश्य छिपी हुई होती है जिससे समाज को वास्तविक उन्नति की राह मिले। इन पर्वों के पीछे हमारे ऋषियों की यही दृष्टि थी कि ऐसे पर्वों व त्यौहारों को मनाने के बहाने उनकी भावी पीढ़ी उनके पीछे छिपे हुए रहस्यों को, प्रेरणाओं को समझ सके तथा अपने जीवन को उसी मार्ग पर चला सके।

हम पर्वों को तो मनाते हैं परन्तु पर्वों के जो सिद्धान्त हैं उनसे हम कोसों दूर रह जाते हैं। हमारे ऋषियों ने जिस उद्देश्य से त्यौहारों की नीति बनायी उसका यथार्थ लाभ न लेकर हम उन्हें अपनी वासना के अनुसार मना लेते हैं।

होली के त्यौहार को जिस रूप में समाज मनाता है उस पर ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मलीन स्वामी श्री भोला बाबा कहते हैं :

माजून खाई भंग की, बौछार कीन्हीं रंग की।
बाजार में जूता उछाला, या किसीसे जंग की ॥
गाना सुना या नाच देखा, ध्वनि सुनी मौचंग की।
सुध-बुध भुलाई आपनी, बलिहारी ऐसे रंग की ॥

होली के पर्व के पीछे भक्त प्रह्लाद की उस अडिग भगवद्‌निष्ठा की कहानी छिपी हुई है जिस निष्ठा के बल पर अग्नि का प्रभाव भी समाप्त हो गया। होली का पर्व सत्यनिष्ठा की विजय का पर्व है। यह पर्व हमें कहता है कि सत्य में, ईश्वर में निष्ठा रखनेवाले की सहायता के लिए प्रकृति अपने कठोर नियमों को भी बदल देती है। इस पर्व के पीछे हमारे ऋषियों का यही ध्येय था कि उनकी सन्तानें इस प्रसंग के द्वारा सत्य की ओर चलें, शांति की ओर चलें, अमरता की ओर चलें। इसीलिए भोला बाबा ने कहा है :

होली अगर है खेलनी, तो संत सम्मत खेलिये।
सन्तान शुभ ऋषि मुनिन की, मत संत आज्ञा पेलिये ॥

ऋषियों के अनुभव को जिन्होंने अपना अनुभव बनाया है, ऋषियों की सच्ची सन्तान वे संत ही होली के तत्त्व को समझा सकते हैं। अतः संतों के मत के अनुसार होली खेलिये।

रंग की पिचकारी से शरीर रँगता है परन्तु संत-सद्‌गुरु की पिचकारी से हृदय में सत्य के ज्ञान का रंग चढता है। शरीर पर लगा रंग धुल जाता है परन्तु गुरु की पिचकारी से रँगे हुए हृदय को मृत्यु भी नहीं मिटा सकती।

होली हुई तब जानिये, पिचकारि सद्‌गुरु की लगे।
सब रंग कच्चे जायँ उड़, इक रंग पक्के में रँगे ॥

होली हुई तब जानिये, श्रुतिवाक्य जल में स्नान हो।
विक्षेप मल सब जाय धुल, निश्चिन्त मन अम्लान हो ॥

हिरण्यकशिपु ने अपने भगवद्भक्त पुत्र प्रह्लाद को मारने के लिए उन्हें जीवित ही चिता में जलाने की योजना बनाई थी क्योंकि वे उनके कहे अनुसार भोग-विलास में नहीं फँसना चाहते थे।

हिरण्यकशिपु की बहन होलिका को आग में न जलने का वरदान मिला था। चिता में बैठी हुई उस होलिका की गोद में प्रह्लाद को बिठा दिया गया और चिता पर आग लगा दी गयी। परन्तु यह क्या ? जिसे न जलने का वरदान प्राप्त था वह होलिका जल गई और प्रह्लाद जीवित रह गये। बिल्कुल उल्टा हो गया क्योंकि प्रह्लाद सत्य की शरण थे, ईश्वर की शरण थे।

संत कहते हैं कि यह जीव प्रह्लाद है। हिरण्यकशिपु यानी अंधी महत्त्वाकांक्षा, वासना जो संसार में रत रहने के लिए उकसाती रहती है। होलिका यानी अज्ञान, अविद्या जो जीव को अपनी गोद में बिठाकर रखती है तथा उसे संसार की त्रिविध तापरूपी अग्नि में जलाना चाहती है। यदि यह जीवरूपी प्रह्लाद ईश्वर और सद्गुरु की शरण में जाता है तो उनकी कृपा से प्रकृति का नियम बदल जाता है। त्रिविध तापरूपी अग्नि ज्ञानाग्नि के रूप में परिवर्तित हो जाती है। उस ज्ञान की आग से अज्ञानरूपी होलिका भस्म हो जाती है तथा जीवरूपी प्रह्लाद मुक्त हो जाता है। यही होली का तत्त्व है।

ब्रह्मवेत्ता कहते हैं :

होली जली तो क्या जली, पापिन अविद्या नहिं जली।
आशा जली नहिं राक्षसी, तृष्णा पिशाची नहिं जली ॥
अज्ञान को खर पर चढ़ा, कर मुख नहीं काला किया।
ताली न पीटी काम की, तो खेल होली क्या लिया ?

होली रंगों का त्यौहार है। रंग जरूर खेलो, मगर गुरुज्ञान का रंग खेलो। रासायनिक रंगों से तो हर साल होली खेलते हो, इस बार गुरुज्ञान के रंग से अपने हृदय को रँग लो तो तुम भी कह उठोगे :

भोला ! भली होली हुई, भ्रम भेद कूड़ा बह गया।
नहिं तू रहा नहिं मैं रहा, था आप सो ही रह गया ॥

भक्त ध्रुव की दृढ़ता

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

जो भक्त दृढ़ता से ईश्वर के मार्ग पर चल पड़ते हैं, वे अपने परम लक्ष्य परमात्मा को पा ही लेते हैं। ऐसे ही एक भगवद्भक्त ध्रुव की कथा 'श्रीमद्भागवत' के चतुर्थ स्कंध में आती है।

स्वायम्भुव मनु और महारानी शतरूपा की दो सन्तानें थीं- प्रियव्रत एवं उत्तानपाद। इनमें से उत्तानपाद की दो रानियाँ थीं- सुनीति और सुरुचि। सुरुचि भोग एवं उत्तम व्यंजनों में रुचि रखती थी और उसके पुत्र का नाम था उत्तम। सुरुचि के विपरीत सुनीति शांत स्वभाव की थी और उसके पुत्र का नाम था ध्रुव।

सुरुचि का मन बाह्य विषयों एवं उनके आकर्षणों में ज्यादा लगता था इसलिए वह राजा की प्रिया थी। उसके पुत्र उत्तम को भी पिता का अधिक स्नेह मिलता था। सुनीति शांत स्वभाववाली, संतोषी नारी थी। उसे बाह्य आकर्षणों में रुचि नहीं थी इसलिये वह राजा का उतना सान्निध्य नहीं पाती थी, जितना कि सुरुचि को मिलता था।

एक दिन पाँच वर्ष के ध्रुव ने अपने पिता की गोद में अपने भाई उत्तम को बैठे हुए देखा तो उनका भी मन हुआ कि 'मैं भी अपने पिता की गोद में बैठूँ।' ऐसा सोचकर वे अपने पिता की गोद में बैठने को गये किन्तु राजा ने उनको स्वीकार नहीं किया। उधर सुरुचि ने भी अपनी सौत के पुत्र को महाराज की गोद में बैठने का यत्न करते हुए देखकर उनके सामने

ही ईर्ष्या भरे शब्दों में कहा :

''बच्चे ! तू राजसिंहासन पर बैठने का अधिकारी नहीं है। तू भी राजा का ही बेटा है इससे क्या हुआ ? तुझको मैंने तो अपनी कोख में धारण नहीं किया। तू अभी नादान है। तुझे पता नहीं है कि तूने किसी दूसरी स्त्री के गर्भ से जन्म लिया है, तभी तो ऐसे दुर्लभ विषय की इच्छा कर रहा है। यदि तुझे राजसिंहासन की इच्छा है तो परम पुरुष श्रीनारायण की आराधना कर और उनकी कृपा से मेरे गर्भ में आकर जन्म ले।''

ध्रुव रोते-रोते अपनी माता सुनीति के पास गये एवं उन्हें ये सारी बातें कह सुनायीं। सुरुचि की कही हुई बातें सुनकर सुनीति को बड़ा दुःख हुआ किन्तु उन्होंने अपने बेटे को ऐसा कुछ नहीं कहा कि जिससे उनके निर्दोष हृदय में द्वेष पैदा हो जाये, वरन् उन समझदार माँ सुनीति ने अपने प्रिय पुत्र ध्रुव से इस प्रकार कहा :

''बेटा ! तेरी सौतेली माँ होने पर भी सुरुचि ने बिल्कुल ठीक बात कही है। जो तपस्या करता है वही सुख पाता है। बिना तपस्या के सुख कहाँ है ? बेटा ! तू भी उन भक्तवत्सल श्रीभगवान का ही आश्रय ले, मुमुक्षु लोग निरंतर जिनकी खोज किया करते हैं। तू स्वधर्म-पालन से पवित्र हुए अपने चित्त में उन्हीं श्रीहरि को बिठा ले एवं अन्य सबका चिंतन छोड़कर केवल उन्हींका भजन कर।

नान्यं ततः पद्मपलाशलोचनाद्
दुःखच्छिदं ते मृगयामि कंचन।
यो मृग्यते हस्तगृहीतपद्मया
श्रियेतरैरंग विमृग्यमाणया॥

बेटा ! उन कमलदललोचन श्रीहरि को छोड़कर मुझे तो तेरे दुःख को दूर करनेवाला और कोई दिखायी नहीं देता। देख, जिन्हें प्रसन्न करने के लिये ब्रह्मा आदि अन्य सब देवता लालायित रहते हैं, वे श्री लक्ष्मीजी भी हाथ में दीपक की भाँति कमल लिये उन्हीं श्रीहरि की निरन्तर खोज किया करती हैं।''

(श्रीमद्भागवत : ४.८.२३)

माता सुनीति के ये वचन अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति करानेवाले थे। अतः उन्हें सुनकर ध्रुव ने बुद्धिपूर्वक अपने चित्त का समाधान किया और वे अपने पिता के नगर से निकल पड़े।

मार्ग में उन्हें देवर्षि नारद मिले एवं बोले :

''बेटा ! अभी तो तू बालक है। तेरी खेलने-खाने की उम्र है। माता के उपदेश से तू योग-साधन कर जिन भगवान की कृपा प्राप्त करने को चला है, मेरे विचार से उन्हें प्रसन्न करना साधारण पुरुषों के लिये अत्यंत कठिन कार्य है। योगी लोग अनेक जन्मों तक अनासक्त रहकर समाधियोग के द्वारा बड़ी-बड़ी कठोर साधनाएँ करते रहते हैं, परंतु भगवान का पता नहीं लगा पाते। इसलिये तू व्यर्थ का हठ छोड़ दे और घर लौट जा। बड़ा होने पर जब परमार्थ-साधन का समय आये, तब उसके लिये प्रयत्न कर लेना।''

...लेकिन ध्रुव अपने निर्णय पर अटल थे, अतः बोले : ''आप भगवान ब्रह्माजी के सुपुत्र हैं और संसार के कल्याण के लिये ही त्रिलोकी में वीणा बजाते हुए सूर्य की भाँति घूमा करते हैं। ब्रह्मन् ! मैं उस पद पर अधिकार प्राप्त करना चाहता हूँ जो त्रिलोकी में सर्वश्रेष्ठ है तथा जिस पर मेरे बाप-दादे और दूसरे कोई भी आरूढ़ नहीं हो सके हैं। आप मुझे उसीकी प्राप्ति का कोई अच्छा-सा मार्ग बताइये।''

ध्रुव की दृढ़ता से प्रसन्न होकर देवर्षि नारद बोले :

''वत्स ! मैं तुम्हारी लगन और दृढ़ता से प्रसन्न हूँ। बेटा ! तेरी माता सुनीति ने तुझे जो कुछ उपाय बताया है, वही तेरे लिए परम कल्याण का मार्ग है। भगवान वासुदेव का भजन ही वह उपाय है, इसलिए चित्त लगाकर तू उन्हींका भजन कर। अब तू यमुना तट पर स्थित परम पवित्र मधुवन में जा और वहाँ स्नानादि से स्वच्छ-शुद्ध होकर आसन पर बैठ जा। तदुपरांत यथाविधि प्राणायाम करना, श्रीहरि का ध्यान करना एवं ध्यान के साथ इस परम गुह्य मंत्र **'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'** का जप करना। संयम व दृढ़ श्रद्धा-भक्ति से लगातार सात रात्रियों तक इस मंत्र का जप करने से साधक आकाश में विचरनेवाले सिद्धों का दर्शन कर सकता है।''

इस प्रकार ध्रुव को मंत्र देकर, जप-ध्यान एवं

प्रभु-पूजन की विधि बताकर नारदजी चले गये। इधर ध्रुव उनके बताये अनुसार साधना में तत्परता से लग गये।

ध्रुव ने छः महीने तक अत्यंत कठोर तपस्या की। पाँचवें माह से तो वह केवल एक पैर पर खड़े हो, बिना अन्न-जल आदि के, केवल वायु पीकर ही तप करने लगे। प्राणायाम के अभ्यास से ध्रुव ने अपने प्राणों को सूक्ष्म कर लिया था। छः महीने के भीतर ही उन्हें अनेकों ऋद्धि-सिद्धियाँ प्राप्त हो गयीं। प्रारंभ में देवी-देवताओं के प्रलोभन भी मिले, किन्तु ध्रुव उनमें फँसे नहीं क्योंकि नारदजी ने उन्हें पहले से ही समझा दिया था कि ऐसी अवस्थाएँ आयेंगी लेकिन तुम उनमें फँसना नहीं। फिर माया ने भयंकर रूप दिखाने शुरू किये किन्तु ध्रुव भयभीत न हुए क्योंकि पूर्ण गुरु का दिया हुआ मंत्र उनके पास था। (क्रमशः)

संस्कृत सीखने का सुनहरा अवसर

संस्कृत भाषा भारत की प्राचीनतम भाषा है। इसे 'देवभाषा' भी कहते हैं। अमेरिका से प्रकाशित विश्व की सर्वश्रेष्ठ व्यावसायिक पत्रिका 'फोर्ब्ज' (जुलाई १९८७) में उल्लेख था कि 'संस्कृत सभी यूरोपीय भाषाओं की जननी है।' ऐसी अपनी देवभाषा को छोड़कर हम अंग्रेजी के पीछे अंधी दौड़ लगा रहे हैं, यह बड़े शर्म की बात है।

आश्रम से प्रकाशित समाचार पत्र 'लोक कल्याण सेतु' के अंक क्रमांक ३३ (पूर्णिमा दिनांक : १९ मार्च से १७ अप्रैल २०००) में संस्कृत भाषा सीखने के लिए सरल संस्कृत व्याकरण का प्रकाशन शुरू किया जाएगा। इससे पाठक मात्र १२० दिनों में संस्कृत भाषा व व्याकरण का सामान्य ज्ञान प्राप्त करके अपनी दैनिक बोल-चाल में उसका उपयोग कर सकेंगे एवं साथ ही सनातन धर्म के संस्कृत ग्रन्थों तथा सत्साहित्य के अध्ययन का भी लाभ उठा सकेंगे।

श्री रामकृष्ण और नाम-संकीर्तन

[श्री रामकृष्ण परमहंस जयंती : ८ मार्च २०००]

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

भगवन्नाम अनंत माधुर्य, ऐश्वर्य और सुख की खान है। इस घोर कलिकाल में तो हरिनाम-जप के अतिरिक्त संसारसागर से पार होने का अन्य कोई उपाय ही नहीं है। 'बृहन्नारदीय पुराण' में आया है :

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

पूरे विश्व में भारत की आध्यात्मिकता का डंका बजानेवाले स्वामी विवेकानन्द के सद्गुरु श्री रामकृष्ण परमहंस ने नाम-संकीर्तन की महिमा पर उपदेश देते हुए कहा है :

''कलिकाल में नारदीय भक्ति है- सदैव प्रभु के नाम और गुणों का कीर्तन करना। जिनके पास समय नहीं है, उन्हें कम-से-कम शाम को तालियाँ बजाते हुए एकाग्रता से 'श्रीमन्नारायण... नारायण...' का कीर्तन करना चाहिए।

अन्य युगों में नाना प्रकार के कठोर साधनयुक्त तपों का नियम था, पर इस युग में उनका अनुष्ठान बहुत कठिन है। एक तो जीव की आयु बहुत अल्प है, उसमें भी अनेक बीमारियाँ उसे निर्बल बना देती हैं। वह कठिन तपस्या करे भी तो कैसे करे ? अतः नाम-संकीर्तन ही उसके लिए उचित कर्त्तव्य है। नाम का गुणगान करने से

देह के सब पाप भाग जाते हैं । देहरूपी वृक्ष पर पापरूपी पक्षी रहते हैं । नाम-संकीर्तन उनके लिये मानों, ताली बजाना है । ताली बजाने से जैसे वृक्ष पर के पक्षी भाग जाते हैं, वैसे ही भगवान के नाम-गुण का संकीर्तन करने से पाप भाग जाते हैं । जैसे सूर्य की धूप से तालाब का जल सूख जाता है, वैसे ही नाम-गुण के संकीर्तन से देहरूपी तालाब के सब पापरूपी जल सूख जाता है ।

सदा ही उनका नाम-गुणगान, संकीर्तन और प्रार्थना करना चाहिए । पुराने लोटे को एक बार माँजने से क्या होगा ? प्रतिदिन माँजना होगा । भगवान का नाम लेने से तन और मन शुद्ध हो जाते हैं । ईश्वर के नाम-संकीर्तन पर संपूर्ण विश्वास होना चाहिए कि इससे हमारे पाप-ताप नष्ट होंगे ही, भवबंधन कटेगा ही ।

चैतन्यदेव ने इस नाम का प्रचार किया था । देखो, चैतन्यदेव कितने बड़े पण्डित थे ! वे भी प्रेम में हँसते-रोते, नाचते-गाते थे । एक बार वे मेड़गाँव के पास से गुजर रहे थे । उन्होंने सुना कि इस गाँव में ढोल बनता है । बस, भावावेश में वे विह्वल हो गये, क्योंकि संकीर्तन के समय ढोल का ही वादन होता है ।''

जाने-अनजाने में या भ्रम से अथवा और किसी प्रकार से क्यों न हो, भगवान का नाम लेने से उसका फल अवश्य मिलेगा । कोई तेल लगाकर स्नान करने जाये तो उसका भी स्नान होता है, किसीको ढकेलकर पानी में गिरा दिया जाये तो उसका भी स्नान होता है, यदि कोई घर में सोया हो और उसके बदन पर पानी डाल दिया जाये तो उसका भी स्नान हो जाता है ।

कलिकाल के लिये है भक्तियोग... नारदीय भक्ति । ईश्वर का नाम-गुणगान करो और व्याकुल होकर प्रार्थना करो : 'हे ईश्वर ! मुझे ज्ञान दो, भक्ति दो, दर्शन दो...'

भक्ति ही सार है । भगवान के नाम-गुणों का कीर्तन करते-करते भक्ति प्राप्त होती है । सब काम छोड़कर आपको संध्या के समय उनका नाम लेना चाहिए ।

बाल्यकाल से ही श्री रामकृष्ण को प्रातः और सायं तालियाँ बजाकर नाम-संकीर्तन करने का अभ्यास था । कभी-कभी वे भावविभोर होकर नृत्य करते हुए 'हरि बोल... हरि बोल... हरि गुरु... गुरु हरि... हरि मेरे प्राण... गोविन्द मेरे जीवन... मन कृष्ण... बुद्धि कृष्ण... प्राण कृष्ण... ध्यान कृष्ण... बोध कृष्ण... ज्ञान कृष्ण... तुम जगत हो... जगत तुममें है... मैं यंत्र हूँ... तुम यंत्री हो...' आदि का उच्च स्वर से कीर्तन किया करते थे । अद्वैत वेदान्त की साधना के फलस्वरूप निर्विकल्प समाधि की अनुभूति कर लेने के पश्चात् भी वे प्रतिदिन इसी प्रकार नाम-संकीर्तन करते थे ।

एक दिन तीसरे प्रहर दक्षिणेश्वर के पंचवटी नामक स्थान पर वे अपने गुरु स्वामी तोतापुरीजी के साथ बैठकर धर्मचर्चा कर रहे थे । संध्या हो जाने पर श्री रामकृष्ण ने उनसे वार्तालाप करना बंद कर दिया और वे ताली बजा-बजाकर संकीर्तन करने लगे । उनके इस आचरण को देखकर तोतापुरीजी महाराज अवाक् हो गये और सोचने लगे कि : 'ये परमहंस जो वेदान्त मार्ग के इतने उत्तम अधिकारी हैं कि जिस निर्विकल्प समाधि को पाने में मुझे चालीस वर्ष लगे, उसे इन्होंने केवल एक ही दिन में प्राप्त कर लिया, तथापि निम्न श्रेणी के अधिकारियों के समान इस प्रकार तालियाँ बजा-बजाकर भजन कर रहे हैं !' उनसे रहा नहीं गया । वे विनोद करते हुए बोल उठे :

''अरे ! रोटी क्यों ठोकते हो ?''

यह सुनकर श्री रामकृष्ण परमहंस ने भी हँसते हुए कहा : ''मैं ईश्वर का नाम ले रहा हूँ और आप कह रहे हैं कि रोटी ठोक रहे हो !''

श्री रामकृष्ण के इस सरल मधुर वाक्य को सुनकर तोतापुरीजी को भी आनंद आ गया । 'उनके ऐसा करने में कोई अर्थ अवश्य होगा' ऐसा समझकर वे चुप रह गये ।

ऐसी थी श्री रामकृष्ण परमहंस की नाम-निष्ठा !

भारतीय संस्कृति के रक्षक : कुमारिल भट्ट

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

काशी के जाने-माने प्रखर छात्र कुमारिल भट्ट काशी के राजमहल की दीवार के पास से गुजर रहे थे। काशीनरेश की सुकन्या बड़ी विदुषी थी। तमाम मत-पंथ एवं संस्कृतियों का उसने अध्ययन किया था। उस काशीनरेश की कन्या का आँसू कुमारिल भट्ट की पीठ पर आ गिरा। कुमारिल भट्ट ने ऊपर देखा तो अट्टालिका पर बैठी हुई राजकन्या आँसू बहा रही थी।

कुमारिल भट्ट उसके पास गये एवं बोले :

''हे विदुषी सुकन्या ! तुम इस तरह बैठी-बैठी आँसू बहा रही हो ! यदि तुम्हें बताने में संकोच न हो तो इसका कारण बताओ।''

यह सुनकर वह और जोर से रो पड़ी। कुमारिल भट्ट द्रवित हो उठे :

''देवी ! अगर तुम्हारी व्यथा मैं मिटा सकूँ तो मुझे प्रसन्नता होगी।''

राजकन्या : ''बुद्ध तो चले गये लेकिन सनातन धर्म की आलोचना करके बौद्ध धर्म का जो प्रचार-प्रसार हो रहा है उससे तो मानव जाति को बड़ी क्षति पहुँचेगी। ईश्वरीय सत्ता को स्वीकार करने से मनुष्य में जो शांति, शक्ति, निश्चिंतता और दैवी गुण विकसित होते हैं, उसकी जगह पर ऐसा भ्रामक प्रचार करने से मानवता कहाँ पहुँचेगी ? यह बात सोचकर मैं बड़ी दुःखी और पीड़ित हो रही हूँ। मेरी इस पीड़ा को कौन मिटायेगा ?''

काम बड़ा कठिन था। फिर भी कुमारिल भट्ट ने कहा : ''देवी ! आपकी यह व्यथा केवल आपकी नहीं है, वरन् पूरी मानव जाति की व्यथा है। आपकी इस व्यथा को कुमारिल भट्ट मिटायेगा।''

उन्होंने ये शब्द बड़े अधिकारपूर्ण वाणी में कहे। कहाँ तो बौद्ध धर्म का पूरा ढाँचा और कहाँ अकेला कुमारिल भट्ट ! बौद्ध धर्म के प्रचार को थामना और मानव को सनातन धर्म की महानता बताना कोई आसान काम नहीं था। उस समय पूरे भारत में बौद्ध भिक्षु छा गये थे।

कुमारिल भट्ट ने सोचा : 'एकांगी बौद्ध धर्म का जो प्रचार हो रहा है उसकी कमियाँ प्रजा को पता चले एवं सर्वांगीण सनातन धर्म क्या कहता है इसका भी प्रजा को पता चले- ऐसा उपाय करना चाहिए। इसके लिए शास्त्रार्थ करना होगा।'

उस वक्त काशी सनातन धर्म का गढ़ था और तक्षशिला बौद्धों का गढ़। उनके लिए काशी को छोड़ना भी बड़ी विकट समस्या थी। फिर भी मानवता के हित में उन्होंने काशी छोड़ने का निर्णय कर लिया ताकि पहले बौद्ध धर्म का पूर्ण अध्ययन कर सकें क्योंकि अध्ययन किये बिना तो उसका खंडन करना संभव न था।

कुमारिल भट्ट तक्षशिला गये और वहाँ उन्होंने बौद्ध धर्म का अध्ययन किया। बाद में उन्होंने बौद्ध धर्म के जो वरिष्ठ आचार्य थे, उन्हें शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी। शास्त्रार्थ करने के लिए कुमारिल भट्ट अकेले थे जबकि सामने तो बौद्ध आचार्यों का समूह था। फिर भी केवल अहिंसा को ही सर्वोपरि माननेवाले बौद्धों से कुमारिल भट्ट ने शास्त्रार्थ किया तो उनके सनातन धर्म की महानता का पलड़ा भारी निकला। कुमारिल भट्ट की विद्वत्ता देखकर आखिर बौद्धों ने एक चाल चली। उन्होंने कहा : ''ईश्वर का अस्तित्व है, इसका प्रमाण क्या है ?''

कुमारिल भट्ट : ''वेद प्रमाण हैं।''

बौद्ध आचार्य : ''वेद जो कहते हैं वह सत्य है, इसका प्रमाण क्या है ?''

काफी देर तक शास्त्रार्थ चला। आखिर चर्चा का अंत लाने के लिये बौद्ध आचार्यों ने कुमारिल भट्ट को

कहा : ''ईश्वर सत्य है, वेद प्रमाण हैं और ईश्वर रक्षक है... ऐसा कहकर तुम पहाड़ से कूदो। अगर तुमको चोट नहीं लगेगी तो हम मानेंगे कि तुम्हारा सनातन धर्म सत्य है। 'हमारा बौद्ध धर्म सत्य है...' ऐसा कहकर हम कूदेंगे ।जिसकाधर्मसत्यहोगा, वहउसकीरक्षाकरेगा।

कुमारिल भट्ट : ''ठीक है।''

'ईश्वर सत्य है, वेद प्रमाण हैं, ईश्वर सबके रक्षक हैं और वे ही मेरी रक्षा करेंगे...' ऐसा कहकर कुमारिल भट्ट पहाड़ की चोटी से कूद पड़े किन्तु उन्हें चोट न लगी ! फिर कुमारिल भट्ट ने बौद्ध आचार्यों से कूदने के लिये कहा, किन्तु वे 'यह तो तुम्हारी कोई माया है...' ऐसा कहकर तिकड़मबाजी करके भाग गये।

फिर उन्होंने एकजुट होकर कुमारिल भट्ट को यह कहकर आत्मदाह के लिए मजबूर किया कि : ''तुम्हारा ही सनातन धर्म कहता है कि गुरुद्रोही को जलकर मर जाना चाहिए। तुमने जिन गुरुओं से विद्या पढ़ी, शास्त्र पढ़े, उन्हीं गुरुओं से शास्त्रार्थ करके उन्हें नीचा दिखाने की कोशिश की। अगर तुम सनातन धर्म को मानते हो तो तुम्हें शास्त्र की यह बात भी तो माननी चाहिए कि गुरुद्रोही को चावल की भूसी में जल मरना चाहिए।''

कुमारिल भट्ट : ''हम यह कुर्बानी भी देंगे।''

चावल की भूसी का ढेर करके वे उसमें खुद लेट गये और ऊपर से भी भूसी डालकर उन्होंने अपने हाथ से आग लगायी एवं वे धीरे-धीरे करके जलने लगे।

इस बात का पता जब आद्य शंकराचार्य को चला तो वे तुरंत कुमारिल भट्ट के पास पहुँचे थे।

कमारिल भट्ट को पर्वत से कूदने पर भी चोट न लगने की एवं अपने धर्म की रक्षा के लिए अपनी कुर्बानी तक दे डालने की बातें आद्य शंकराचार्य द्वारा जानकर जनता में सनातन धर्म के प्रति आस्था बढ़ गयी। फिर आद्य शंकराचार्य ने शास्त्रार्थ करते-करते पूरे भारत में सनातन धर्म की पताका लहरा दी।

धन्य हैं कुमारिल भट्ट जैसे सनातन धर्म के रक्षक, जिन्होंने प्राणों की आहूति देकर भी सनातन धर्म की रक्षा की !

*

दीर्घायु का रहस्य

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

चीन के पेकिंग (बीजिंग) शहर के एक २५० वर्षीय वृद्ध से पूछा गया : ''आपकी इतनी दीर्घायु का रहस्य क्या है ?''

उस चीनी वृद्ध ने जो उत्तर दिया, वह सभी के लिये लाभदायक व उपयोगी है। उसने कहा :

''मेरे जीवन में तीन बातें हैं जिनकी वजह से मैं इतनी लम्बी आयु पा सका हूँ।

एक तो यह है कि मैं कभी उत्तेजना के विचार नहीं करता। दिमाग में उत्तेजनात्मक विचार नहीं भरता हूँ। मेरे दिल-दिमाग शांत रहें, ऐसे ही विचारों को पोषण देता हूँ।

दूसरी बात यह है कि मैं उत्तेजित करनेवाला, आलस्य को बढ़ानेवाला भोज्य पदार्थ नहीं लेता और न ही अनावश्यक भोजन लेता हूँ। मैं स्वाद के लिये नहीं, स्वास्थ्य के लिये भोजन करता हूँ।

तीसरी बात यह है कि मैं गहरा श्वास लेता हूँ। नाभि तक श्वास भर जाये इतना श्वास लेता हूँ और फिर छोड़ता हूँ। अधूरा श्वास नहीं लेता।''

लाखों-करोड़ों लोग इस रहस्य को नहीं जानते हैं। वे पूरा श्वास नहीं लेते हैं। पूरा श्वास लेने से फेफड़ों का एवं दूसरे अवयवों का अच्छी तरह से उपयोग होता है एवं श्वास की गति कम होती है। जो लोग आधे श्वास लेते हैं वे एक मिनट में १४-१५ श्वास गँवा देते हैं। जो लोग लम्बे श्वास लेते हैं वे एक

मिनट में १०-१२ श्वास ही लेते हैं, इससे आयुष्य की बचत होती है।

कार्य करते समय एक मिनट में १२-१३ श्वास खर्च होते हैं। दौड़ते समय या चलते-चलते बात करते समय एक मिनट में १८-२० श्वास खर्च होते हैं। क्रोध करते समय एक मिनट में २४ से २८ श्वास खर्च हो जाते हैं और काम-भोग के समय एक मिनट में ३२ से ३६ श्वास खर्च हो जाते हैं। जो अधिक विकारी हैं उनके श्वास ज्यादा खत्म होते हैं, उनकी नस-नाड़ियाँ जल्दी कमजोर हो जाती हैं। हर मनुष्य का जीवनकाल उसके श्वासों के मुताबिक कम-अधिक होता है। कम श्वास (प्रारब्ध) लेकर आया है तो भी निर्विकारी ज्यादा जी लेगा। भले कोई अधिक श्वास लेकर आया हो लेकिन अधिक विकारी जीवन जीने से वह उतना नहीं जी सकता जितना जी सकता था।

जब आदमी शांत होता है तो उसके शरीर से जो आभा निकलती है वह बहुत शांति से निकलती हैं और जब आदमी उत्तेजनात्मक भावों में, विचारों में आता है या क्रोध के समय काँपता है उस वक्त उसके रोमकूप से अधिक आभा निकलती है। यही कारण है कि क्रोधी आदमी जल्दी थक जाता है जबकि शांत आदमी जल्दी नहीं थकता।

शांत होने का मतलब यह नहीं कि आलसी होकर बैठे रहें। अगर आलसी होकर बैठे रहेंगे तो शरीर के पुर्जे बेकार हो जायेंगे, शिथिल हो जायेंगे, बीमार हो जायेंगे। उन्हें ठीक करने के लिए फिर श्वास ज्यादा खर्च होंगे।

अति परिश्रम न करें और अति आरामप्रिय न बनें। अति खायें नहीं और अति भूखामरी न करें। अति सोयें नहीं और अति जागें नहीं। अति संग्रह न करें और अति अभावग्रस्त न बनें। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है : **युक्ताहारविहारस्य...**

डॉ. फ्रेडरिक कई संस्थाओं के अग्रणी थे। उन्होंने ८४ वर्षीय एक वृद्ध सज्जन को सतत कर्मशील रहते हुए देखकर पूछा : ''एक तो ८४ वर्ष की उम्र, नौकरी से सेवानिवृत्त, फिर भी इतने सारे कार्य और इतनी भाग-दौड़ आप कैसे कर लेते हैं ? ग्रह-नक्षत्र की जाँच-परख में आप मेरा इतना साथ दे रहे हैं ! क्या आपको थकान या कमजोरी महसूस नहीं होती ? क्या आपको कोई बीमारी नहीं है ?''

जवाब में उस वृद्ध ने कहा : ''आप अकेले ही नहीं, और भी अपने परिचित डॉक्टरों को बुलाकर मेरी तन्दुरुस्ती की जाँच करवा लें, मुझे कोई बीमारी नहीं है।''

कई डॉक्टरों ने मिलकर उस वृद्ध की जाँच की और देखा कि उस वृद्ध के शरीर में बुढ़ापे के लक्षण तो प्रकट हो रहे थे लेकिन फिर भी वह वृद्ध प्रसन्नचित्त था। इसका कारण क्या हो सकता है ?

जब डॉक्टरों ने इस बात की खोज की तब पता चला कि वह वृद्ध दृढ़ मनोबलवाला है। शरीर में बीमारी के कितने ही कीटाणु पनप रहे हैं लेकिन दृढ़ मनोबल एवं प्रसन्नचित्त रहने के कारण वे कीटाणु नष्ट हो जाते हैं।

डॉक्टरों ने निर्णय दिया : ''इनके शरीर में रोग तो हैं लेकिन इनके दृढ़ मनोबल, प्रसन्नचित्त स्वभाव एवं निरंतर क्रियाशील रहने के कारण रोग के कीटाणु उत्पन्न होकर नष्ट भी हो जाते हैं। वे रोग इनके मन पर कोई प्रभाव नहीं डाल पाते।''

आलस्य शैतान का घर है। आलस्य से बढ़कर मानव का दूसरा कोई शत्रु नहीं है। जो सतत प्रयत्नशील एवं उद्यमशील रहता है, सफलता उसीका वरण करती है। कहा भी गया है :

उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः॥

'उद्यमशील के ही कार्य सिद्ध होते हैं, आलसी के नहीं। कभी-भी सोये हुए सिंह के मुख में मृग स्वयं प्रवेश नहीं करते।'

अतः हे विद्यार्थियों ! उद्यमी बनो। साहसी बनो। अपना वक्त बरबाद मत करो। जो समय को बरबाद करते हैं, समय उन्हें बरबाद कर देता है। समय को ऊँचे एवं श्रेष्ठ कार्यों में लगाने से समय का सदुपयोग होता है एवं तुम्हें भी लाभ होता है। जैसे कोई व्यक्ति चपरासी के पद पर हो तो आठ घंटे के समय का उपयोग करे, जिलाधीश के पद पर हो तो भी उतना

ही करे तथा राष्ट्रपति के पद पर हो तो भी उतना ही करे, फिर भी समय का उपयोग उतना ही होने पर भी फायदा अलग-अलग होता है। अतः समय का सदुपयोग जितने ऊँचे कार्यों में करोगे, उतना ही लाभ ज्यादा होगा और यदि ऊँचे-में-ऊँचे कार्य परमात्मा की प्राप्ति में समय लगाओगे तो तुम स्वयं परमात्मरूप होने का सर्वोच्च लाभ भी प्राप्त कर सकोगे।

उठो... जागो... कमर कसो। श्रेष्ठ विचार, श्रेष्ठ आहार-विहार एवं श्वास की गति के नियंत्रण की युक्ति को जानकर, दृढ मनोबल रखकर, सतत कर्मशील रहकर दीर्घायु बनो। अपने समय को श्रेष्ठ कार्यों में लगाओ। फिर तुम्हारे लिये महान् बनना उतना ही सहज हो जायेगा, जितना सूर्योदय होने पर सूरजमुखी का खिलना सहज होता है।

ॐ शांति... ॐ हिम्मत... ॐ साहस... ॐ बल... ॐ दृढता... ॐ... ॐ... ॐ...

मधुसंचय

[पूर्णिमा व्रतधारी साधक भाई-बहनों के लिए विशेष]

पूज्य गुरुदेवश्री ने कहा है :

''हे साधक ! तुमने आज तक बहुत किया। करने योग्य और न करने योग्य भी काम किये... अभी भी कर रहे हो। अब 'न करने' का एक काम और कर लो। लगता है न अटपटा ? ...लेकिन यह कर लो तो तुम्हारी बहुत सारी खटपटें मिट जायेंगी। 'न करने' में विश्रांति पाने से शांति आयेगी जो सामर्थ्य की जननी है।''

नोट : इस स्तंभ के अन्तर्गत पूज्यश्री की अमृतवाणी से संचित वे अमृतवचन आप लिखकर भेज सकते हैं जो आपको बहुत अच्छे लगे हों।

(क) यह भी लिखें कि आपको वे क्यों अच्छे लगे।

(ख) शब्दसीमा : ५ से १० वाक्य।

(ग) प्रवचन का स्थल व दिनांक अवश्य लिखें।

(घ) अपना नाम, पता व पूर्णिमा व्रतधारी कार्ड क्रमांक अवश्य लिखें।

मध्य प्रदेश में धर्मांतरण के लिए बच्चों पर अत्याचार

सेवा का ढोंग रचनेवाली मिशनरियाँ धर्मान्तरण करने के लिए किस हद तक गिर सकती हैं इस बात की पुष्टि मध्य प्रदेश के राजगढ़ जिले के मिशनरी स्कूल में घटी इस निंदनीय घटना से हो जाती है। एक ईसाई पादरी के अत्याचारों के शिकार बने हुए बालकों ने अपनी आपबीती बताते हुए कहा कि :

''फादर हमें भगवान शंकर और रामभक्त हनुमान की जगह ईसा मसीह की पूजा करने और चर्च जाने के लिए डण्डे के जोर पर बाध्य कर रहे थे।''

आठ से बारह साल की उम्र के ये सभी छात्र अनुसूचित जाति, जनजाति तथा पिछड़े हुए वर्ग के हैं। उनके अभिभावकों ने उन्हें पढा-लिखाकर 'बड़ा आदमी' बनाने की लालसा में राजगढ़ के मिशनरी छात्रावास में दाखिल कराया था। उस छात्रावास में आसपास के गाँवों के २९ बच्चे थे। फिलहाल इन सभी बच्चों को मिशनरी छात्रावास से निकाल लिया गया है। राजगढ पुलिस ने इनमें से नौ बच्चों का चिकित्सकीय परीक्षण भी कराया है। २२ बच्चों को प्रशासन के हरिजन छात्रावास में रखा गया है तथा शेष सात को उनके अभिभावक अपने साथ ले गये हैं।

विक्रम, जगदीश, बने सिंह, कमल, राकेश, हेमराज तथा अन्य बच्चों ने अपने ऊपर किये गये

अत्याचार की जो कहानी सुनायी, वह रोंगटे खड़े कर देनेवाली है। बच्चों के मुताबिक, उनके छात्रावास के प्रमुख फादर अब्राहम हररोज रात में उन्हें बेरहमी से पीटते थे। वे उन्हें जबरन चर्च ले जाते और भगवान यीशु (ईसा मसीह) की पूजा करने को कहते।

कमल के मुताबिक : ''फादर ने मेरे पास रखी भगवान शंकर की तस्वीर (फोटो) फाड़कर फेंक दी। वे कहते हैं कि भगवान यीशु सबसे ताकतवर हैं। वे तुम्हें शक्तिमान् और बड़ा आदमी बना देंगे।''

ईसा मसीह को बड़ा बताने का फादर अब्राहम का अपना अलग तरीका था। वह रात को बच्चों को उल्टा लटकाता था और उनसे हनुमान या शंकर का नाम लेने को कहता। कमल के मुताबिक :

''हम हनुमान का नाम लेते तो फादर जोर से डण्डा मारते और ईसा के नाम पर धीरे से डण्डा मारते। फिर कहते कि : देखा ! ईसा कितने बड़े हैं ! उनके नाम पर डण्डा भी धीरे-से लगता है। हनुमान उनके आगे कुछ भी नहीं है।''

बने सिंह का कहना है कि : ''फादर ने एक लड़के को ईसाई बना लिया है। वह उसे नहीं मारता था। वह लड़का भी हम सबसे कहता था कि : देखो, मैं ईसाई बन गया तो मुझ पर मार नहीं पड़ती ! तुम ईसाई बन जाओ तो फादर तुम्हें भी नहीं पीटेगा।''

बच्चों का यह भी कहना है कि उन्हें उनके माँ-बाप से भी नहीं मिलने दिया जाता था।

बच्चों के साथ आये हुए उनके अभिभावकों के मुताबिक, बच्चों की पिटाई की खबर उन्हें सरकारी स्कूल के एक मास्टर ने गाँव आकर दी थी। उक्त मास्टर ने ही उन्हें यह बताया कि फादर बच्चों पर ईसाई बनने के लिए दबाव डाल रहा है।

अभिभावकों ने बताया कि फादर खुद उनके गाँव आया था और यह कहकर बच्चों को अपने साथ ले गया था कि वह उन्हें पढ़ा-लिखाकर बड़ा आदमी बना देगा। उसने हम सबसे पाँच-पाँच सौ रूपये भी लिये थे।

सूचना पाकर कुछ लोग छात्रावास गये तो बच्चों की दयनीय हालत उनके सामने प्रकट हो आयी। बाद में वे स्थानीय भाजपा नेता एवं पूर्व विधायक रघुनंदन लाल शर्मा के साथ बच्चों को लेकर पुलिस अधीक्षक के पास गये। बच्चों ने जिला कलेक्टर और पुलिस अधीक्षक के सामने अपने बयान दिये। बाद में नौ बच्चों की चिकित्सकीय जाँच करायी गयी। २९ में से सात बच्चों को उनके अभिभावकों को सौंप दिया गया। बाकी के २२ बच्चों को कलेक्टर ने हरिजन छात्रावास में ठहरा दिया।

फादर अब्राहम ने इन बच्चों को मिशनरी छात्रावास में रखा था लेकिन उनका दाखिला कान्वेन्ट स्कूल में नहीं कराया था। उन्हें सरकारी स्कूल में दाखिल कराया गया था। उन्हें मिलनेवाले सभी सरकारी लाभ मिशनरी ले रही थी। अगर मिशनरी सच में मदद करना चाहती तो वह इन बच्चों को कान्वेन्ट स्कूल में ही दाखिल कराती, लेकिन ऐसा नहीं किया गया। समाजसेवा के नाम पर झूठे लालच देकर अबोध बच्चों को घृणित यातनाएँ दी गयीं।

['नवभारत टाइम्स' दिनांक : ५ फरवरी २००० से संकलित]

*

धर्मान्तरण की कुचाल छोड़ दो

भारत में धर्मान्तरण का बुरा रोग फैलानेवाले हे तथाकथित ईसाईयों !

तुम धर्मात्मा ईसा की राह पर नहीं बल्कि अपने मलिन मन की मलिन इच्छाओं, वासनाओं की राह पर चल रहे हो। तुम मुट्ठी भर लोगों की यह स्वार्थपूर्ण कूटनीति कभी कामयाब नहीं होगी। बेहतर तो यही होगा कि किसी का धर्मपरिवर्तन नहीं, अपनी मलिन मुरादों का परिवर्तन कर डालो। काश ! तुम ईसा मसीह को पहचान पाते ! उन्हें न पहचाननेवाले नासमझ लोगों ने उन्हें सूली पर चढ़ाया। आप उन नासमझ लोगों से कम नहीं हो। उनके कहे अनुसार जीवन जीकर आत्मकल्याण करने के बजाय उनके उपदेशों को आपने भी फाँसी पर लटका रखा है और अपने स्वार्थपूर्ण कुचाल को धर्म का नाम देकर खुद

को बहका रहे हो।

काश ! ईसा का कोई सच्चा सपूत पैदा हो जाए जो धर्म-प्रचार के नाम पर ईसा का नाम बदनाम करनेवाले इन मुट्ठी भर तथाकथित ईसाईयों के सुनियोजित षड्यंत्र का भंडाफोड़ कर सके।

धर्मान्तरण का जाल ईसा मसीह ने नहीं, ईसा के नाम पर कुछ स्वार्थी लोगों ने फैलाया है। भेड़ के पीछे जैसे भेड़ों का समूह ही चल पड़ता है, कोई सिर उठाकर देखता ही नहीं, उसी प्रकार इन मुट्ठी भर स्वार्थी तत्त्वों, तथाकथित ईसाईयों के पीछे ईसाई समुदाय आँखें मूँदकर चल पड़ा है। कोई सिर ऊपर उठाकर निष्पक्ष होकर देखे तो वास्तविकता से परिचित हो। जिन्होंने भी इसकी वास्तविकता पर दृष्टि डाली है और उससे परिचित हुए हैं, उन्होंने उन स्वार्थी तत्त्वों व तद्धर्म का तत्क्षण वैसे ही त्याग कर दिया जैसे सर्प केंचुली त्याग देता है। ऐसे अनेक लोगों को मैं जानता हूँ। 'गीता प्रेस' की 'परलोक व पुनर्जन्म' किताब में विस्तार से लिखी हुई एक ईसाई लाटपादरी के जीवन की वास्तविकता से परिचित होने पर सेम्युअल सेम्शन एवं पादरी रेवरेंड उस कूपमंडूक से सीख लेकर सनातन धर्म की शरण आ गये थे।

ऐसे अनेक प्रसंग पढ़ने-सुनने में आते रहे हैं, आ रहे हैं।

हे धर्मान्तरण का षड्यंत्र फैलानेवालों ! अब सावधान हो जाओ। अपनी कुचाल छोड़ दो। तुम्हारे ही लोगों में जागरुकता आ रही है। उनसे वास्तविकता कब तक छुप सकती है ?

- दीपक 'बाँकी' (बी. कॉम.)
अमदावाद

शारीरिक, मानसिक, नैतिक व आध्यात्मिक ये सब पीड़ाएँ वेदान्त का अनुभव करने से तुरन्त दूर होती हैं और... कोई आत्मनिष्ठ महापुरुष का संग मिल जाय तो वेदान्त का अनुभव करना कठिन कार्य नहीं है।
('जीवन रसायन' में से)

बुद्धिमान् साधक ! सावधान...

जिन्होंने आत्मविद्या का अनुभव ही नहीं किया, वे समाज में प्रचार करते फिरते हैं कि गुरु की क्या आवश्यकता है ? गुरु करना निरर्थक है।

वे बेचारे किसी ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु के मार्गदर्शन में चलकर आत्मविद्या का अनुभव करते तो ये शब्द कदापि नहीं कहते।

स्वामी शिवानंदजी ने सत्य के कंटकमय मार्ग में गुरु को एकमात्र आश्रय बताते हुए कहा है :

''रसोई सीखने के लिए आपको सिखानेवाले की आवश्यकता पड़ती है, विज्ञान सीखने के लिए आपको प्राध्यापक की आवश्यकता पड़ती है, कोई भी कला सीखने के लिए आपको गुरु चाहिए, तो क्या आत्मविद्या सीखने के लिए गुरु की आवश्यकता नहीं है ? अगर आपको सद्गुरु प्राप्त नहीं होंगे तो आध्यात्मिक मार्ग में आप आगे नहीं बढ़ सकोगे। जिनके सान्निध्य में आपको आध्यात्मिक उन्नति महसूस हो, जिनके वक्तव्य से आपको प्रेरणा मिले, जो आपके संशयों को दूर कर सकें, जो काम, क्रोध, लोभ से मुक्त हों, जो निःस्वार्थ हों, प्रेम बरसानेवाले हों, जो अहंपद से मुक्त हों, जिनके व्यवहार में गीता, भागवत, उपनिषदों का ज्ञान छलकता हो, जिन्होंने प्रभुनाम की प्याऊ लगाई हो उन्हें आप गुरु करना। ऐसे जागृत सत्पुरुष की शरण की खोज करना। अगर आप ऐसा कहेंगे कि 'अच्छा गुरु कोई है ही नहीं...'

तो गुरु भी कहेंगे कि 'कोई अच्छा शिष्य है ही नहीं।' आप शिष्य की योग्यता प्राप्त करें तो आपको सद्गुरु की योग्यता, महत्ता दिखेगी और समझ में आयेगी।''

अपनी संकीर्ण बुद्धि की तराजू में सद्गुरु को तौलनेवालों के लिए स्वामी शिवानंदजी के उक्त वचन बार-बार पठन-चिन्तन-मनन करने योग्य हैं।

जिनके चरणों में श्री आनंदमयी माँ सत्संग-लाभ प्राप्त करती थीं, वे स्वामी श्री अखण्डानंदजी सरस्वती कहते हैं :

''मन को धीरे-धीरे सत्संग के द्वारा भगवान में लगाओ। परंतु बिना सद्गुरु के और सद्गुरु की कृपा के कोई चाहे कि हमारा मन भगवान में लग जाये तो नहीं लग सकता।'' ('श्रीसद्गुरु-प्रसाद' पृष्ठ ३१)

''अभ्यास, वैराग्य, भगवान की कृपा, सद्गुरु का अनुग्रह- इनके द्वारा मन स्थिर होता है। मन केवल बातें करने से स्थिर नहीं होता।'' (पृष्ठ ३३)

सद्गुरु रामदासजी को प्राप्त कर छत्रपति शिवाजी अपनेको शक्तिशाली बना पाये। कबीरजी के गुरुदेव संत रामानंदजी थे। भगवान श्रीरामचंद्रजी के गुरुदेव वशिष्ठजी महाराज थे। भगवान श्रीकृष्ण के गुरुदेव सांदीपनि थे। पूज्य बापू (संत श्री आसारामजी महाराज) के गुरुदेव स्वामी श्री लीलाशाहजी बापू थे। उनके गुरुदेव स्वामी केशवानंदजी थे।

बापूजी कहते हैं कि हमें गुरुदेव नहीं मिलते तो न जाने हम कहाँ होते !

सुरेशानंदजी का जीवन गुरुसान्निध्य के पहले कैसा घिनौना था... वे स्वयं बोलते हैं। महन्त चंदीराम गुरुदर्शन, गुरुसान्निध्य के पहले कैसा घिनौना जीवन जीते थे... वे स्वयं कहते हैं और गुरुप्राप्ति के लाभ का स्मरण करके गद्गद् हो जाते हैं।

ऐसे सुरेशानंद, चंदीराम जैसे एक-दो नहीं, लाखों लोगों का अनुभव है, फिर भी जिन्हें महापुरुषों के प्रति, गुरुओं के प्रति एलर्जी है तो उन्हें मुबारक हो। हिन्दू धर्म के संतों के प्रति किसीको घृणा या द्वेष है तो उनके उस वमन को बुद्धिमान् व्यक्ति देखने-सुनने को तैयार नहीं होते। उनका वमन उन्हींको मुबारक हो। बुद्धिमान् साधक सावधान रहें।

सचमुच सद्गुरु व उनकी करुणा-कृपा के अभाव में साधक बेचारा मन के चँगुल में फँस जाता है। फलतः वह यद्यपि भगवान के मार्ग में लगा दिखता है, पर वास्तव में वह मन के मार्ग में होता है। उसे ब्रह्मनिष्ठ संत श्री आसारामजी बापू की अमृतवाणी की ऑडियो कैसेट **'मन को कैसे वश करें ?'** बार-बार सुनना चाहिए।

'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' में भी शिवजी भगवान श्रीरामचंद्रजी के सद्गुरुदेव वशिष्ठजी महाराज से कहते हैं : **''हे मुनीश्वर ! जैसे साबुन से धोबी वस्त्र का मैल उतारता है, वैसे ही गुरु और शास्त्र अविद्या को दूर करते हैं।''**

संत कबीरदासजी ने भी कहा है :

गुरु धोबी शिष्य कपड़ा, साबुन सर्जनहार।
सूरत शिला पर बैठकर, निकसे मैल अपार॥

जब गुरुरूपी धोबी शिष्यरूपी कपड़े की मैल अविद्या को निकालने के लिए कसौटीरूपी साबुन लगाये और शिष्य साबुन लगते ही घबरा उठे, विद्रोह करे, शास्त्र व सद्गुरु की निंदा करे तो ऐसे शिष्य का कल्याण भला कैसे होगा ? वह जन्म-मरण के चक्र में घटीयंत्र की नाईं चलता रहेगा।

नानकदेव का वचन है :

संत का निंदक महा हत्यारा,
संत का निंदक परमेश्वर मारा।
संत के निंदक की पूजे न आस,
नानक ! संत का निंदक सदा निराश॥

गोस्वामी तुलसीदासजी भी कहते हैं :

हरि गुरु निंदा सुनइ जो काना।
होइ पाप गोघात समाना॥
हर गुर निंदक दादुर होई।
जन्म सहस्र पाव तन सोई॥

(संपादक)

*

कर्जदार होने से बचें

फ्रिज़, कार, स्कूटर आदि साधनों को 'लोन' (उधार) पर लानेवाले ये नहीं समझते कि दिखने में तो १८% ब्याज है लेकिन हर माह जमा करते जाओ तो लोन लेनेवालों को अंततः २८ से ३२% ब्याज लग जाता है जिसे 'फ्लैट ब्याज' कहते हैं।

दिखने में तो १८% ब्याज है। चतुराई से दिखाते हैं १५ या १८% ब्याज लेकिन कारों, फ्रिज़ों पर २८ से ३२% ब्याज पड़ जाता है। जितनी चदरिया उतने पैर पसारें। फ्रिज़, टी.वी., कार, स्कूटर लाकर अपनेको कर्जे और ब्याज में खपा देने की अपेक्षा थोड़ा धैर्यवान् होना चाहिए। आजकल के ब्याजखोरों द्वारा प्रायोजित आकर्षक विज्ञापनों जैसे '१०० दीजिए टी.वी. लीजिए... ५०० दीजिए स्कूटर लीजिए... ५००० दीजिए कार लीजिए...' से दूर की समझ न रखनेवाले भोले-भाले लोग बुरी तरह शोषित हो रहे हैं। अतः आप भी बचें एवं औरों को भी बचायें। ब्याज और कर्ज की चिन्ता में खप जाने की अपेक्षा बिना फ्रिज़, टी.वी. एवं बिना भौतिक आडम्बरों के निश्चिन्त जीवन हजारगुना अच्छा है। आवश्यकता कम होना यह समझदारी का जीवन है।

[संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से]

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

* इस संसाररूपी जल में मनरूपी दूध इस तरह मिल गया है कि संसार से मन को अलग कर पाना संभव नहीं दिखता। उसे अलग करना हो तो वैराग्यरूपी छाछ डालकर जमा दो। उससे दही बनेगा। जैसे दूध से बना दही खट्टा लगता है, वैसे ही वैराग्य आने पर संसार खट्टा लगने लगेगा। फिर उस दही को विवेकरूपी मथनी से मथोगे तो मक्खन निकलेगा। मक्खन की स्थिति को प्राप्त हुआ मन फिर संसाररूपी जल में रहते हुए भी दूध की तरह मिल नहीं जायेगा वरन् मक्खन की तरह ऊपर तैरता रहेगा।

* वाष्प, जल और बरफ- इन तीनों का जैसा संबंध है, वैसा ही संबंध आत्मा, मन और शरीर का है। वाष्प आत्मा है, जल मन है और बरफ शरीर है। जल एवं बरफ का नाश होता हुआ दिखता है किन्तु तात्त्विक दृष्टि से किसीका नाश नहीं होता। पानी को गरमी दो तो वाष्प बनेगा एवं ठंडक दो तो बरफ बनेगा। अर्थात् परमात्मचिंतन के समय मन परमात्मस्वरूप रहता है और शरीर के चिंतन के समय मन शरीररूप रहता है। जल की तरह मन मध्यावस्था में रहता है। मन जब जड़ शरीर का चिंतन करता है तब बरफ की तरह जड़ और चेतन का चिंतन करता है तो चैतन्य जैसा हो जाता है।

*

* पू. बापू की सत्संग-वाटिका से पुष्पचयन *

* किसी सरिता के किनारे बैठकर जब सरिता की ओर देखते हैं तो उसमें फूल भी बहते दिखाई देते हैं और कचरा भी बहता दिखाई देता है किन्तु उससे द्रष्टा अप्रभावित ही रहता है। ऐसे ही समय की धारा में सुख-दुःख, मान-अपमान, हर्ष-शोक, राग-द्वेष आदि के सारे प्रसंग गुजर जाते हैं, बह जाते हैं। उनके साथ तुम भी बहो मत, वरन् किनारे बैठकर देखते रहो तो सब दुःखों से सदा के लिए छूट जाने

की कला पा लोगे और यह जान लोगे कि सुख-दुःख तुम्हें स्पर्श नहीं करते हैं, केवल गुजरते हैं।

✲ दुःखों से छूटना इतना सरल है जितना किसी धनवान् के लिये निर्धन होना। धनवान् ने सारी जिंदगी जो इकट्ठा किया है उसे छोड़ दे तो अमीरी छूट जाती है, ऐसे ही तुमने जो मान्यताएँ पकड़ रखी हैं उन्हें छोड़ दो तो सुखी हो जाओगे।

✲ जीवन सहज स्वाभाविक हो तो बहुत लाभ होता है। **एक द्वार तो ऐसा होना चाहिए कि जहाँ अहंकाररहित हो सकें। गुरु का द्वार अहंकार सजाने का द्वार नहीं, अहंकार मिटाने का द्वार है।** गुरु का द्वार व्यक्तित्व-विसर्जन का द्वार है। व्यक्तित्व के सर्जन से जन्म-मरण बढ़ते हैं, किन्तु व्यक्तित्व के विसर्जन से परमात्मसुख प्रगट होता है।

'ऋषि प्रसाद' स्वर्णपदक प्रतियोगिता

'ऋषि प्रसाद स्वर्णपदक प्रतियोगिता' में उत्साह से संलग्न सेवाधारियों में से पहले दस जिन सेवाधारियों की सदस्य संख्या वर्त्तमान में अधिकतम चल रही है उन भाग्यशालियों के नाम निम्नानुसार हैं :

क्रम	नाम	शहर
१	श्री वजुभाई ढोलरिया	सूरत
२	श्रीमती जया कृपलानी	भोपाल
३	श्री वृंदावन गुप्ता	दिल्ली
४	श्री महेशचंद्र शर्मा	कलकत्ता
५	श्री संजीव धवन	सहारनपुर
६	श्री विमल के. हिंगु	जेतपुर
७	श्री त्रिलोक सिंह	हिसार
८	श्री दिनेशभाई डी. जोशी	अमदावाद
९	श्री संजय कुमार	चण्डीगढ़
१०	श्री राजेश जालान	बिलासपुर

...तो आएँ... देर न करें... अभी भी बहुत समय है। अभी चार महीने बाकी हैं। आप भी इस प्रतियोगिता में सहभागी होकर दैवी कार्य में जुट जायें और आज ही अपना सेवाधारी क्रमांक और रसीद बुकें 'ऋषि प्रसाद' मुख्यालय, अमदावाद से प्राप्त करें।
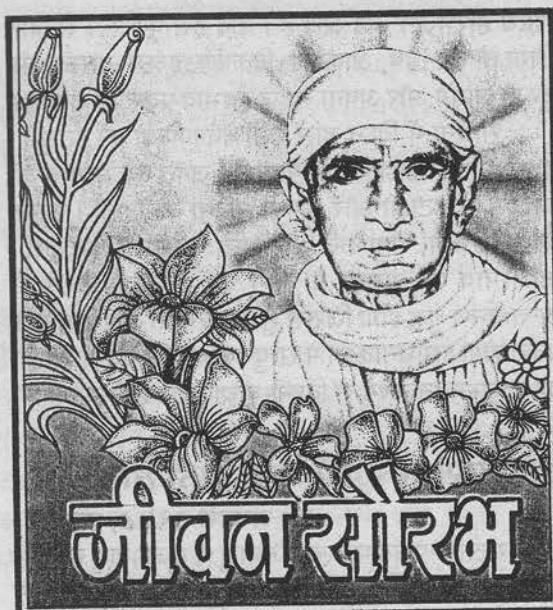
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ
प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

[गतांक का शेष]

लोग साधना भी करते हैं, भक्ति भी करते हैं, पूजा-पाठ भी करते हैं, ध्यान-भजन भी करते हैं, सेवा भी करते हैं, गुरु के शिष्य भी कहलाते हैं, परन्तु राग-द्वेष के भँवर में जाने की आदत नहीं जाती तो सब साधन-भजन और सेवा के ऊपर पानी फिर जाता है।

साधकों को यह ध्यान में रखना चाहिए कि जिन्हें खराब समझते हैं उनके साथ उदारता से व्यवहार करें, उनके गुण देखें, दोषों को भूल जायें। ऐसा करने से चित्त में शांति आने लगेगी। राग-द्वेष को पुष्ट करेंगे तो सभी साधन-भजन चौपट हो जायेंगे। ईर्ष्या और जलन से अन्तःकरण अशुद्ध बनेगा तो साधना का पथ लम्बा हो जायेगा।

आये थे हरिभजन को, ओटन लगे कपास।

जो संसार मिथ्या है, हर क्षण बदल रहा है, स्वप्न की तरह गुजरता जा रहा है उसकी सत्यता को दिमाग में भरने से परेशानी के सिवाय कुछ भी हाथ में नहीं आता। तुलसीदासजी ने 'श्रीरामचरितमानस' में शिवजी के मुख से कहलवाया है :

उमा कहहुँ मैं अनुभव अपना। सत्य हरि भजन जगत सब सपना॥

सर्वत्र केवल परमात्मा ही व्याप रहे हैं यह जानना ही

'सत्य हरिभजन' का अर्थ है। यदि इसे पूर्ण रूप से जान लिया तो राग-द्वेष, आकर्षण-विकर्षण, इच्छा-वासना सब दूर हो जायेंगे और अपना सहज स्वभाव प्रकट हो जाएगा।

साधना में विघ्न डालें ऐसी बेवकूफियों को हटाओ। दुःख देनेवाले अज्ञान को मिटाओ। जगत की सत्यता को चित्त में से हटाओ और अपनी महिमा को जानो। उसके लिए जप करो, सेवा करो और अन्तःकरण को शुद्ध करो। साक्षीभाव एवं समता में रहने का अभ्यास करने से अन्तःकरण शुद्ध होगा जिससे शुद्ध आत्मरस और शुद्ध सुख प्रकट होगा। साधनाकाल में सत्पुरुषों का संग एवं सत्शास्त्रों का पठन-मनन करने से विघ्न-बाधाएँ कम होने लगेंगी।''

*

अभ्यास में रुचि क्यों नहीं होती ?

१५ जनवरी १९५८, कानपुर।

सत्संग-प्रसंग पर एक जिज्ञासु ने पूज्य बापू से प्रश्न किया : ''स्वामीजी ! कृपा करके बताएँ कि हमें अभ्यास में रुचि क्यों नहीं होती ?''

पूज्य स्वामीजी : ''बाबा ! अभ्यास में तब मजा आयेगा जब उसकी जरूरत महसूस करोगे।

एक बार एक सियार (गीदड़) को खूब प्यास लगी। प्यास से व्याकुल होकर दौड़ता-दौड़ता वह एक नदी के किनारे गया और जल्दी-जल्दी पानी पीने लगा। सियार की पानी पीने की इतनी तड़प देखकर नदी में रहनेवाली एक मछली ने उससे पूछा : 'सियार मामा ! तुम्हें पानी से इतना सारा मजा क्यों आता है ? मुझे तो पानी में इतना मजा नहीं आता।'

सियार ने जवाब दिया : 'मुझे पानी से इतना मजा क्यों आता है यह तुझे जानना है ?' मछली ने कहा : 'हाँ मामा !'

सियार ने तुरन्त ही मछली को गले से पकड़कर तपते हुए बालू पर फेंक दिया। मछली बेचारी पानी के बिना बहुत छटपटाने लगी, खूब परेशान हो गई और मृत्यु के एकदम निकट आ गयी। तब सियार ने उसे पुनः पानी में डाल दिया। फिर मछली से पूछा : 'क्यों ? अब तुझे पानी में मजा आने का कारण समझ में आया ?'

मछली : 'हाँ, अब मुझे पता चला कि पानी ही मेरा जीवन है। इसके सिवाय मेरा जीना असम्भव है।'

इस प्रकार मछली की तरह जब तुम भी अभ्यास की जरूरत महसूस करोगे तब तुम अभ्यास के बिना रह नहीं सकोगे। रात-दिन उसीमें लगे रहोगे।

एक बार गुरु नानकदेव से उनकी माता ने पूछा : 'बेटा ! रात-दिन क्या बोलता रहता है ?'

नानकजी ने कहा : 'माताजी ! **आखां जीवां विसरे मर जाय।** रात-दिन जब मैं अकाल पुरुष के नाम का स्मरण करता हूँ तभी तो जीवित रह सकता हूँ। यदि नहीं जपूँ तो मेरा जीना मुश्किल है। यह सब प्रभुनाम-स्मरण की कृपा है।'

इस प्रकार सत्पुरुष अपने साधनाकाल में प्रभुनाम-स्मरण के अभ्यास की आवश्यकता का अनुभव करके उसके रंग में रँगे रहते हैं।''

(क्रमशः)

पंचतत्त्वों में मित्र-शत्रु-उदासीन भाव

*** संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ***

तत्त्वों में कोई उदासीन, कोई मित्र, कोई शत्रु होते हैं। उन्हीं पंचतत्त्वों से बने हैं प्राणियों के शरीर। अतः उनमें जिन तत्त्वों की प्रधानता होती है उन्हीं के अनुसार उनका स्वभाव बनता है। जैसे, सिंह में अग्नि तत्त्व का प्राधान्य होने के कारण वह मांसभक्षी होता है। गाय में पृथ्वी तत्त्व का प्राधन्य होने के कारण वह मांसभक्षी नहीं होती। शेर कभी घास नहीं खाता और गाय कभी मांस नहीं खाती।

तत्त्व	मित्र	शत्रु	उदासीन
पृथ्वी	जल	अग्नि	वायु
जल	पृथ्वी	अग्नि	वायु
अग्नि	वायु	जल	पृथ्वी
वायु	अग्नि	जल	पृथ्वी
आकाश	पृथ्वी		

तत्त्वों की सजातीयता होती है तो पराये भी अपने हो जाते हैं और तत्त्वों की विजातीयता होती है तो सहोदर भी शत्रु हो जाते हैं।

आकाश तत्त्व की अभिवृद्धि हेतु अगर **'खं'** शब्द का जप किया जाय तो आकाश तत्त्व के बढ़ने से कौटुम्बिक कलह-संघर्ष में शांति लायी जा सकती है। होली, दीपावली, दशहरा, शिवरात्रि तथा ग्रहण के समय मंत्र की जागृति के लिए अपने-अपने इष्टमंत्र का जप अवश्य करना चाहिये। कहा गया है : **दैवाधीनं जगत्सर्वं मंत्राधीनाश्च देवता।** अर्थात् दैव के अधीन सब संसार है और मंत्र के अधीन देवता हैं।

शिवरात्रि को घी का दिया जलाकर सवालाख बीजमंत्र का जप करना बहुत हितकारी है। शुद्ध सात्त्विक भावनाओं को सफल करने में बड़ा सहयोग देगा यह मंत्र। हो सके तो एकान्त में शिवजी का विधिवत् पूजन करें या मानसिक पूजन करें। सवालाख बार **'बं'** का उच्चारण भिन्न-भिन्न सफलताएँ प्राप्त करने में मदद करेगा। जोड़ों का दर्द, वमन, कफ, गैस्ट्रिक, डायबिटिज आदि बीमारियों में यह लाभ पहुँचाता है। स्थूल शरीर को तो फायदा पहुँचाते ही हैं ये बीजमंत्र। बीजमंत्र सूक्ष्म और कारण शरीर में भी अपनी दैवी विशेषता जागृत करते हैं।

टॉन्सिल का ऑपरेशन कभी नहीं

यह रोग बालक, युवा, प्रौढ़ सभी को होता है किन्तु बालकों में विशेष रूप से पाया जाता है। जिन बालकों की कफ-प्रकृति होती है, उनमें यह रोग देखने में आता है। गला कफ का स्थान होता है। बच्चों को मीठा और फल ज्यादा खिलाने से, बच्चों के अधिक सोने से तथा दिन में अधिक सोने के कारण उनके गले में कफ एकत्रित होकर गलतुण्डिका शोथ (टॉन्सिल) हो जाता है। इससे गले में कास (खाँसी), खुजली एवं दर्द के साथ-साथ सर्दी एवं ज्वर रहता है जिससे बालकों को खाने-पीने में व नींद में तकलीफ होती है।

बार-बार गलतुण्डिका शोथ होने से शल्य चिकित्सक (सर्जन) तुरन्त शल्य क्रिया करने की सलाह देते हैं। औषधि से मिटे तो शल्य क्रिया की मुसीबत मोल नहीं लेनी चाहिए क्योंकि शल्य क्रिया से गलतुण्डिका शोथ दूर होता है, लेकिन उसके कारण दूर नहीं होते। उसके कारण के दूर नहीं होने से छोटी-मोटी तकलीफें मिटती नहीं, बढ़ती रहती हैं।

४० वर्ष पहले एक विख्यात डॉक्टर ने 'रीडर डायजेस्ट' में एक लेख लिखा था जिसमें गलतुण्डिका शोथ की शल्य क्रिया करवाने को मना किया था।

बालकों के गलतुण्डिका शोथ की शल्य क्रिया करवाना- ये माँ-बाप के लिए महा पाप है क्योंकि ऐसा करने से बालकों की जीवनशक्ति का ह्रास होता है।

निसर्गोपचारक श्री धर्मचन्द्र सरावगी ने लिखा है: ''मैंने टॉन्सिल के सैकड़ों रोगियों को बिना ऑपरेशन ठीक होते देखा है।''

कुछ वर्षों पहले इंग्लैण्ड और आस्ट्रेलिया के पुरुषों ने अनुभव किया कि टॉन्सिल के ऑपरेशन से पुरुषत्व में कमी आ जाती है और स्त्रीत्व के थोड़े लक्षण उभरने लगते हैं।

इटालियन कान्सोलेन्ट, मुंबई से प्रकाशित **'इटालियन कल्चर'** नामक पत्रिका के अंक नं. १,२,३ (सन् १९५५) में लिखा था कि : 'बचपन में टॉन्सिल का ऑपरेशन करानेवालों के पुरुषत्व में कमी आ जाती है।' बाद में डॉक्टर नोसेन्ट और गाइडो कीलोरोली ने १९७३ में एक कमेटी की स्थापना कर इस पर गहन संशोधन किया। १० विद्वानों ने ग्रेट ब्रिटेन एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के लाखों पुरुषों पर परीक्षण करके उपरोक्त परिणाम पाया तथा इस खतरे को लोगों के सामने रखा।

संशोधन का परिणाम जब लोगों को जानने को मिला तो उन्हें आश्चर्य हुआ ! टॉन्सिल के ऑपरेशन से सदा थकान महसूस होती है तथा पुरुषत्व में कमी आने के कारण जातीय सुख में भी कमी हो जाती है और बार-बार बीमारी होती रहती है। जिन-जिन जवानों के भी टॉन्सिल का ऑपरेशन हुआ था, वे बंदूक चलाने में कमजोर थे, ऐसा युद्ध के समय जानने में आया।

जिन बालकों के टॉन्सिल बढ़े हों ऐसे बालकों को बर्फ का गोला, कुल्फी, आइसक्रीम, बर्फ का पानी, फ्रिज़ का पानी, चीनी, गुड़, दही, केला, टमाटर, उड़द, ठंडा पानी, खट्टा-मीठा, फल, मिठाई, पिपरमिंट, बिस्कुट, चॉकलेट ये सब चीजें खाने को न दें। जो आहार ठंडा, चिकना, भारी, मीठा, खट्टा और बासी हो, वह उन्हें न दें।

दूध भी थोड़ा-सा और वह भी हल्दी डालकर दें। पानी उबला हुआ पिलायें।

⁂ उपचार ⁂

टॉन्सिल के उपचार के लिए हल्दी सर्वश्रेष्ठ औषधि है। इसका ताजा चूर्ण टॉन्सिल पर दबायें, गरम पानी से कुल्ले करवायें और गले के बाहरी भाग पर इसका लेप करें तथा इसका आधा-आधा ग्राम चूर्ण शहद में मिलाकर बार-बार चटाते रहें। दालचीनी के आधे ग्राम से २ ग्राम महीन पाउडर को २०-३०

ग्राम शहद में मिलाकर चटायें।

✲ कब्ज हो तो हरड़ दें। मुलेठी चबाने को दें। ८ से २० गोली खदिरादिवटी या यष्टिमधु घनवटी या लवंगादिवटी चबाने को दें।

✲ कांचनार गुगल का १ से २ ग्राम चूर्ण करके शहद में चटायें।

✲ कफकेतु रस या त्रिभोवन कीर्तिरस या लक्ष्मीविलास रस (नारदीय) १ से २ गोली देवें।

✲ आधे से २ चम्मच अदरक का रस शहद में मिलाकर देवें।

✲ त्रिफला या रीठा या नमक या फिटकरी के पानी से बार-बार कुल्ले करवायें।

✲ गले में मफलर या पट्टी लपेटे रखना चाहिए।

- वैद्यराज अमृतभाई

साँईं श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, संत श्री आसारामजी आश्रम, जहाँगीरपुरा, वरियाव रोड, सूरत।

गौदुग्ध में है कैन्सर-निरोधक तत्त्व

अमेरिका की कार्नेल यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिक डॉ. डेल बाऊमैन ने गाय के दूध में कैन्सर निरोधक तत्त्व कोंजुगेटेड लिनियोइक एसिड (सी. एल. ए.) पाये जाने की पुष्टि की है।

विज्ञान इस बात को साबित कर चुका है कि सी. एल. ए. रसायन कोलन (बड़ी आँत का निचला हिस्सा), प्रोस्टेट (पौरुष ग्रन्थि), गर्भाशय तथा स्तन के कैन्सर को रोकने में सहायक होता है परन्तु यह प्राणीजन्य स्रोतों से ही प्राप्त होता है। अभी तक सी. एल. ए. के सुनिश्चित स्रोत वैज्ञानिकों की पहुँच के बाहर थे जिससे यह असरकारक कैन्सर-निरोधक रसायन उपचार के लिए उपलब्ध नहीं था। गाय के दूध में इस रसायन की पुष्टि हो जाने के बाद वैज्ञानिकों को सी. एल. ए. का एक सुलभ स्रोत प्राप्त हुआ है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि गाय का दूध मात्र उत्तम पोषक ही नहीं अपितु कैन्सर जैसे घातक रोग को रोकने की एक सुलभ औषधि भी है।

एकादशी माहात्म्य

[आमलकी एकादशी : १६ मार्च २०००]

युधिष्ठिर ने भगवान श्रीकृष्ण से कहा : ''श्रीकृष्ण ! मुझे फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी का नाम और माहात्म्य बताने की कृपा कीजिये।''

भगवान श्रीकृष्ण बोले : ''महाभाग धर्मनन्दन ! फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी का नाम 'आमलकी' है। इसका पवित्र व्रत विष्णुलोक की प्राप्ति करानेवाला है। राजा मान्धाता ने भी महात्मा वशिष्ठजी से इसी प्रकार का प्रश्न पूछा था जिसके जवाब में वशिष्ठजी ने कहा था :

''महाभाग ! भगवान विष्णु के थूकने पर उनके मुख से चन्द्रमा के समान कान्तिमान् एक बिन्दु प्रकट होकर पृथ्वी पर गिरा। उसीसे आमलक (आँवले) का महान् वृक्ष उत्पन्न हुआ जो सभी वृक्षों का आदिभूत कहलाता है। इसी समय प्रजा की सृष्टि करने के लिए भगवान ने ब्रह्माजी को उत्पन्न किया और ब्रह्माजी ने देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, नाग तथा निर्मल अन्तःकरणवाले महर्षियों को जन्म दिया। उनमें से देवता और ऋषि उस स्थान पर आये, जहाँ विष्णुप्रिय आमलक का वृक्ष था। महाभाग ! उसे देखकर देवताओं को बड़ा विस्मय हुआ क्योंकि उस वृक्ष के बारे में वे नहीं जानते थे। उन्हें इस प्रकार विस्मित देख आकाशवाणी हुई : 'महर्षियों ! यह सर्वश्रेष्ठ आमलक का वृक्ष है, जो विष्णु को प्रिय है। इसके स्मरणमात्र से गोदान का फल मिलता है। स्पर्श करने से इससे दुगुना और फल भक्षण करने से तिगुना पुण्य प्राप्त होता है। यह सब पापों को हरनेवाला वैष्णव वृक्ष है। इसके मूल में विष्णु, उसके ऊपर ब्रह्मा, स्कन्ध में परमेश्वर भगवान रुद्र, शाखाओं में मुनि, टहनियों में देवता, पत्तों में वसु, फूलों में मरुद्गण तथा फलों में समस्त प्रजापति वास करते हैं। आमलक सर्वदेवमय है। अतः विष्णुभक्त पुरुषों के लिए यह परम पूज्य है। इसलिए सदा प्रयत्नपूर्वक आमलक का सेवन करना चाहिये।''

ऋषि बोले : ''आप कौन हैं ? देवता हैं या कोई और ? हमें ठीक-ठीक बताइये।''

पुनः आकाशवाणी हुई : ''जो सम्पूर्ण भूतों के कर्त्ता और समस्त भुवनों के स्रष्टा हैं, जिन्हें विद्वान् पुरुष भी कठिनता से देख पाते हैं, वे ही सनातन विष्णु मैं हूँ।''

देवाधिदेव भगवान विष्णु का यह कथन सुनकर वे ऋषिगण भगवान की स्तुति करने लगे। इससे भगवान श्रीहरि संतुष्ट हुए

और बोले : ''महर्षियों ! तुम्हें कौन-सा अभीष्ट वरदान दूँ ?''

ऋषि बोले : ''भगवन् ! यदि आप संतुष्ट हैं तो हम लोगों के हित के लिए कोई ऐसा व्रत बतलाइये, जो स्वर्ग और मोक्षरूपी फल प्रदान करनेवाला हो।''

श्रीविष्णुजी बोले : ''महर्षियों ! फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष में यदि पुष्य नक्षत्र से युक्त एकादशी हो तो वह महान् पुण्य देनेवाली और बड़े-बड़े पातकों का नाश करनेवाली होती है। इस दिन आँवले के वृक्ष के पास जाकर वहाँ रात्रि में जागरण करना चाहिए। इससे मनुष्य सब पापों से छूट जाता है और सहस्र गोदान का फल प्राप्त करता है। विप्रगण ! यह व्रत सभी व्रतों में उत्तम है, जिसे मैंने तुम लोगों को बताया है।''

ऋषि बोले : ''भगवन् ! इस व्रत की विधि बताइये। इसके देवता और मंत्र क्या हैं ? पूजन कैसे करें ? उस समय स्नान और दान कैसे किया जाता है ?''

भगवान विष्णु ने कहा : ''द्विजवरों ! इस एकादशी को व्रती प्रातःकाल दन्तधावन करके यह संकल्प करे कि 'हे पुण्डरीकाक्ष ! हे अच्युत ! मैं एकादशी को निराहार रहकर दूसरे दिन भोजन करूँगा। आप मुझे शरण में रखें।' ऐसा नियम लेने के बाद पतित, चोर, पाखण्डी, दुराचारी, गुरुपत्नीगामी तथा मर्यादा भंग करनेवाले मनुष्यों से वह वार्तालाप न करे। अपने मन को वश में रखते हुए नदी में, पोखरे में, कुएँ पर अथवा घर में ही स्नान करे। स्नान के पहले शरीर में मिट्टी लगाये।''

* मृत्तिका लगाने का मंत्र *

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पापं जन्मकोट्यां समर्जितम् ॥

'वसुन्धरे ! तुम्हारे ऊपर अश्व और रथ चला करते हैं तथा वामन अवतार के समय भगवान विष्णु ने भी तुम्हें अपने पैरों से नापा था। मृत्तिके ! मैंने करोड़ों जन्मों में जो पाप किये हैं, मेरे उन सब पापों को हर लो।' (४७.४३)

* स्नान का मंत्र *

त्वं मातः सर्वभूतानां जीवनं तत्तु रक्षकम्।
स्वेदजोद्भिज्जजातीनां रसानां पतये नमः॥
स्नातोऽहं सर्वतीर्थेषु ह्रदप्रस्रवणेषु च।
नदीषु देवखातेषु इदं स्नानं तु मे भवेत् ॥
(४७.४४.४५)

'जल की अधिष्ठात्री देवी ! मातः ! तुम सम्पूर्ण भूतों के लिये जीवन हो। वही जीवन, जो स्वेदज और उद्भिज्ज जाति के जीवों का भी रक्षक है। तुम रसों की स्वामिनी हो। तुम्हें नमस्कार है। आज मैं सम्पूर्ण तीर्थों, कुण्डों, झरनों, नदियों और देवसम्बन्धी सरोवरों में स्नान कर चुका। मेरा यह स्नान उक्त सभी स्नानों का फल देनेवाला हो।'

विद्वान् पुरुष को चाहिये कि वह परशुरामजी की सोने की प्रतिमा बनवाये। प्रतिमा अपनी शक्ति और धन के अनुसार एक या आधे माशे सुवर्ण की होनी चाहिये। स्नान के पश्चात् घर आकर पूजा और हवन करे। इसके बाद सब प्रकार की सामग्री लेकर आँवले के वृक्ष के पास जाये। वहाँ वृक्ष के चारों ओर की जमीन झाड़-बुहार, लीप-पोतकर शुद्ध करे। शुद्ध की हुई भूमि में मंत्रपाठपूर्वक जल से भरे हुए नवीन कलश की स्थापना करे। कलश में पंचरत्न और दिव्य गन्ध आदि छोड़ दे। श्वेत चन्दन से उसका लेपन करे। उसके कण्ठ में फूल की माला पहनाये। सब प्रकार के धूप की सुगन्ध फैलाये। जलते हुए दीपकों की श्रेणी सजाकर रखे। तात्पर्य यह है कि सब ओर से सुन्दर एवं मनोहर दृश्य उपस्थित करे। पूजा के लिये नवीन छाता, जूता और वस्त्र भी मँगाकर रखे। कलश के ऊपर एक पात्र रखकर उसे दिव्य लाजों (खीलों) से भर दे। फिर उसके ऊपर परशुरामजी की मूर्ति (सुवर्ण की) स्थापित करे। **'विशोकाय नमः'** कहकर उनके चरणों की, **'विश्वरूपिणे नमः'** से दोनों घुटनों की, **'उग्राय नमः'** से जाँघों की, **'दामोदराय नमः'** से कटिभाग की, **'पद्मनाभाय नमः'** से उदर की, **'श्रीवत्सधारिणे नमः'** से वक्षःस्थल की, **'चक्रिणे नमः'** से बायीं बाँह की, **'गदिने नमः'** से दाहिनी बाँह की, **'वैकुण्ठाय नमः'** से कण्ठ की, **'यज्ञमुखाय नमः'** से मुख की, **'विशोकनिधये नमः'** से नासिका की, **'वासुदेवाय नमः'** से नेत्रों की, **'वामनाय नमः'** से ललाट की, **'सर्वात्मने नमः'** से संपूर्ण अंगों तथा मस्तक की पूजा करे। ये ही पूजा के मंत्र हैं। तदनन्तर भक्तियुक्त चित्त से शुद्ध फल के द्वारा देवाधिदेव परशुरामजी को अर्घ्य प्रदान करे। अर्घ्य का मंत्र इस प्रकार है :

नमस्ते देवदेवेश जामदग्न्य नमोऽस्तु ते।
गृहाणार्घ्यमिमं दत्तमामलक्या युतं हरे ॥

'देवदेवेश्वर ! जमदग्निनन्दन ! श्री विष्णुस्वरूप परशुरामजी ! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आँवले के फल के साथ दिया हुआ मेरा यह अर्घ्य ग्रहण कीजिये।'

तदनन्तर भक्तियुक्त चित्त से जागरण करे। नृत्य, संगीत, वाद्य, धार्मिक उपाख्यान तथा श्रीविष्णुसम्बन्धिनी कथा-वार्ता आदि के द्वारा वह रात्रि व्यतीत करे। उसके बाद भगवान विष्णु के नाम ले-लेकर आमलक वृक्ष की परिक्रमा एक सौ आठ या अट्ठाईस बार करे। फिर सबेरा होने पर श्रीहरि की आरती करे। ब्राह्मण की पूजा करके वहाँ की सब सामग्री उसे निवेदन कर दे। परशुरामजी का कलश, दो वस्त्र, जूता आदि सभी वस्तुएँ दान कर दे और यह भावना करे कि : 'परशुरामजी के स्वरूप में भगवान विष्णु मुझ पर प्रसन्न हों।' तत्पश्चात् आमलक का स्पर्श करके उसकी प्रदक्षिणा करे और स्नान करने के बाद विधिपूर्वक ब्राह्मणों को भोजन कराये। तदनन्तर कुटुम्बियों के साथ बैठकर स्वयं भी भोजन करे।

सम्पूर्ण तीर्थों के सेवन से जो पुण्य प्राप्त होता है तथा सब प्रकार के दान देने से जो फल मिलता है, वह सब उपर्युक्त विधि के पालन से सुलभ होता है। समस्त यज्ञों की अपेक्षा भी अधिक फल मिलता है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। यह व्रत सब व्रतों में उत्तम है।''

वशिष्ठजी कहते हैं : ''महाराज ! इतना कहकर देवेश्वर भगवान विष्णु वहीं अन्तर्धान हो गये। तत्पश्चात् उन समस्त महर्षियों ने उक्त व्रत का पूर्णरूप से पालन किया। नृपश्रेष्ठ ! इसी प्रकार तुम्हें भी इस व्रत का अनुष्ठान करना चाहिये।''

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : ''युधिष्ठिर ! यह दुर्धर्ष व्रत मनुष्य को सब पापों से मुक्त करनेवाला है।'' ['पद्मपुराण' से]

लापता बहन मिली

१० अप्रैल '९९ को मेरी छोटी बहन घर से बिना बताये अचानक लापता हो गई । मैंने अमदावाद आश्रम के पते पर बापूजी को पत्र लिखा किन्तु बापूजी वहाँ नहीं थे । मैंने अपनी जपसंख्या बढ़ा दी । इस तरह सवातीन महीने बीत गये और इस दरमियान हम लोगों ने खूब रुपये खर्च कर डाले । मेरे घरवालों ने १००० रूपयों की और व्यवस्था की एवं कहा : ''बापूजी के पास निकल जा, इसी समय ।''

रायपुर आश्रम से पता चला कि बापूजी गुरुपूनम के अवसर पर इन्दौर (म. प्र.) आ रहे हैं । मैं १८ जुलाई '९९ को इन्दौर के लिये निकल पड़ा । दूसरे दिन इन्दौर पहुँचा और तभी से मैंने बापूजी से मिलने के लिए पाँच-सात बार प्रयास किया किन्तु असफल रहा । मैंने दृढ़ संकल्प किया था कि बापूजी से मुलाकात करके ही जाऊँगा, अन्यथा नहीं जाऊँगा ।

२० जुलाई '९९ को बापूजी का अंतिम सत्संग दिवस था । बापूजी दोपहर बारह बजे दिल्ली के लिये रवाना होनेवाले थे । मैंने अपनी बहन की फोटो हाथ में पकड़कर पूज्यश्री को दूर से ही दिखा दी और बताया कि : ''बापूजी ! यह मेरी छोटी बहन है जो कुँवारी है और पिछले साढ़ेतीन महीने से लापता है ।'' तभी मेरे परम पूज्य बापूजी ने दाहिने हाथ में एक सेवफल लेकर फोटो को मारा । मैं खुशी-खुशी घर आया और उसी रात को मेरी बहन का पता लग गया । ठीक एक सप्ताह बाद मेरी बहन अकेली सकुशल वापस आ गई ।

ऐसे हैं मेरे सद्गुरु ! परम पूज्य बापूजी को हमारे घर-परिवार की ओर से शत-शत नमन !

- मुकेश कुमार दुबे
ग्राम-पोस्ट : तुमगाँव, जि. महासमुन्द (म. प्र.).

'कान्धार पहुँचे हुए अपहृत विमान में उन्होंने पेन पर जब गुरुदेव की तस्वीर देखी...'

दिनांक : १० जनवरी २०००

परम आदरणीय संपादक महोदय !

पूज्य गुरुदेव वैसे तो अन्तर्यामी हैं, ब्रह्मज्ञानी हैं, अपने भक्तों के तारनहार हैं फिर भी इस बार हमारे द्वारा, इस देश के प्रधानमंत्री अटलजी पर उनकी जो कृपा हुई वह पहले कभी नहीं हुई है और आगे इसकी जरूरत कभी न पड़े तो ही अच्छा है ।

इस बार गुरुदेव ने अपने इस सेवक से १६० बन्दों की जान बचाने की जो सेवा करवायी, वह उनका चमत्कार ही तो है !

२४ दिसम्बर '९९ के दिन इण्डियन एयरलाइन्स का एक जहाज कुछ आपराधिक तत्त्वों द्वारा अपहरण कर कान्धार (अफगानिस्तान) ले जाया गया था । सभी यात्रियों को बन्धक बनाकर वे अपनी माँगें मनवाने का प्रयास कर रहे थे ।

२७ दिसम्बर को हमारे प्रधानमंत्रीजी ने इस जहाज को छुड़वाने के लिए एक दूसरा जहाज भेजा जिसमें डॉक्टर, इंजीनियर व मंत्रालय के बन्दे थे । उनमें मैं भी था ।

२८ दिसम्बर '९९ को अपहृत जहाज में तकनीकी खराबी के कारण अंधेरा हो गया और अपहरणकर्त्ता पागल-से हो गये । उन्होंने एलान कर दिया कि : 'पहले हमारे जहाज में रोशनी दो, नहीं तो हम यात्रियों को मारना शुरू कर देंगे ।'

एक तो अपहरणकर्त्ताओं का डर, दूसरे, जहाज में रोशनी नहीं और तीसरे, अपहरणकर्त्ताओं द्वारा यात्रियों को जान से मारने की धमकी । सुबह से शाम हो गयी । स्थिति काफी तनावपूर्ण हो गयी क्योंकि हमारी टीम का कोई भी व्यक्ति जहाज के अन्दर जाकर काम करने को तैयार नहीं था ।

पर मैंने **मन-ही-मन** गुरुदेव की आज्ञा लेकर जहाज के अन्दर काम करने की 'हाँ' की, तो मेरे सभी साथी भौचक्के रह गये ! **मैं गुरुदेव के दिये हुए गुरुमंत्र का जाप करते-करते** अपने मिशन पर चल दिया । मैं गुरुदेव के नाम व उनके मंत्र का सहारा लेकर अपहृत जहाज की सीढ़ियों पर चढ़ने लगा । जैसे ही आखिरी सीढ़ी पर पहुँचा, दो अपहरणकर्त्ताओं से मेरा सामना हुआ । दोनों के एक-एक हाथ में रिवाल्वर व दूसरे हाथ में

हथगोले थे। उन्होंने मेरी तलाशी ली।

तलाशी में सबसे पहले उनको मिला गुरुदेव की तस्वीरवाला पेन व चाबी का गुच्छा जिसे देखकर वे चौंके और पूछा : ''यह तस्वीर किसकी है ?'' मैंने कहा : ''मेरे गुरुदेव की।'' उसका दूसरा सवाल : ''इनका नाम क्या है ?'' मैंने गुरुदेव का नाम बताया। फिर उन्होंने पूछा : ''कहाँ के रहनेवाले हैं और किस जाति के हैं ?'' मैंने वह भी बता दिया। उनका रुख थोड़ा नरम हुआ।

मैंने उस जहाज में एक घण्टे तक काम किया और उसकी तकनीकी खराबी को ठीक करके जहाज में रोशनी कर दी। गुरुदेव की कृपा से जितनी देर मैं जहाज में रहा, ऐसा लगा कि गुरुदेव मेरे साथ हैं और मुझसे काम करवा रहे हैं जबकि अपहरणकर्त्ता पिस्तौल ताने खड़ा था और मुझे बार-बार कह रहा था कि 'कोई चालाकी की तो गोली मार दूँगा... जहाज में लाइट नहीं आयी तो बम से उड़ा दूँगा।'

जैसे ही मैं काम करके नीचे आया, मेरे सभी साथी मुझे ऐसे देख रहे थे जैसे मैं जिन्दा भूत हूँ। उन्होंने जहाज के अन्दर का हाल पूछा। मैंने कहा : ''मुझे मेरे गुरुदेव जहाज के अन्दर लेकर गये थे १६० बेकसूर लोगों की जान बचाने और वे ही मुझे वापस लाये हैं।''

गुरुदेव कितने दयालु हैं ! जिस जहाज में यात्री ५ दिनों से बन्धक थे तथा किसी फैसले की उम्मीद नहीं थी वहाँ मात्र गुरुदेव के फोटो-दर्शन से ही अपहरणकर्त्ताओं के सारे फैसले केवल दो दिन में हो गये और सारे यात्री सकुशल घर लौट गये। गुरुदेव ने इस छोटे से सेवक द्वारा इतना बड़ा काम करवा दिया !

गुरुदेव ने जिन अटलजी को तीसरी बार प्रधानमंत्री पद पर बैठाया है, उनकी कुर्सी में कोई दाग न लग जाये उसकी रक्षा के लिए मुझे ऐसे मिशन पर भेजकर उन्होंने मुझे धन्य कर दिया !

एक जनवरी को मैं अपनी टीम सहित अपहृत जहाज लेकर वापस दिल्ली आया। जब तक मैं यहाँ नहीं आया, तब तक मेरी पत्नी व बच्चे गुरुदेव का ही ध्यान करते रहे।

मैं अपने गुरुवर को पुनः शत शत प्रणाम करता हूँ और आशा करता हूँ कि ऐसी कठिन परिस्थिति में वे समय आने पर अपने देश का ही नहीं, बल्कि पूरे विश्व का भी कल्याण करते रहेंगे।

गुरुदेव के ही चरणों का एक दास,
- राकेशकुमार शर्मा
सीनियर मास्टर टेक्नीशियन,
इण्डियन एयरलाइन्स, पालम, नई दिल्ली।

*

बोरतवाड़ा (गुज.) : यहाँ ६ से ८ फरवरी २००० तक त्रिदिवसीय सत्संग समारोह का आयोजन हुआ। १८ वर्षों के पश्चात् इस ग्राम में पूज्यश्री का पुनः आगमन हुआ। ग्राम के भक्तजन वर्षों से गुरुदेवश्री के दर्शन-सत्संग के लिए पलकें बिछाए हुए थे।

ज्ञान-भक्ति-योगमार्ग के अनुभवनिष्ठ पूज्यश्री ने सत्संग-प्रवचन में सरल हृदय के धनी ग्राम्य भक्तजनों को संबोधित करते हुए हाथ जोड़कर कहा कि : **''मौत आकर गला दबा ले, रोग आकर शरीर को घेर ले उसके पहले अपना दिल उस दिलबर परमात्मा से जोड़ लें– यह आप लोगों से हाथ जोड़कर मेरी प्रार्थना है। केवल भगवान में प्रीति करो। भगवान के सिवाय दूसरा कोई प्रीति करने योग्य है ही नहीं।''**

कलियुग के लोगों को भगवन्मार्ग पर लगाने के लिए संतों की युक्तियाँ लाजवाब हैं। यदि रोने से कोई भगवन्मार्ग पर आगे बढ़ता है तो कबीरजी रो लेते हैं, यदि हाथ जोड़ने से कोई भगवन्मार्ग पर, अपने परम लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है तो संत वह भी कर लेते हैं क्योंकि :

संत ही तो हैं करुणा की मूर्ति, संत ही नम्र, सुधा की खान।
संत ही शीतल-सुधा बरसाते, तप्त जीवों का ताप मिटाते॥

वीरमगाँव (गुज.) : यहाँ के भक्तजन भी वर्षों से प्रयासरत थे पूज्यश्री को अपने ग्राम में लाने के लिए। अन्ततः अपनी श्रद्धा, भक्ति और पुरुषार्थ से वे सफल हुए। पूज्यश्री ने एकान्त के लिए निर्धारित समय में से भी समय निकालकर ११ से १३ फरवरी यानी तीन दिनों तक यहाँ अपने पावन अमृतवचनों से ज्ञान-भक्ति की वर्षा करते रहे। पूज्यश्री ने सत्संग-सुधा रसपान कराते हुए कहा कि : **''कलियुग में कुसंग बहुत हो गया। अब तो घर-घर में, हृदय-हृदय में सत्संग हो ऐसी मेरी इच्छा है।''**

गोधरा (गुज.) : गोधरा स्थित आश्रम में १७ से २० फरवरी तक चार दिवसीय **ध्यान योग शिविर** संपन्न हुआ। प्रथम दिवस विद्यार्थियों के लिए था जिसमें पूज्यश्री द्वारा मानसिक व बौद्धिक शक्तियाँ बढ़ाने के यौगिक प्रयोग कराये गये।

पूनम व्रतधारियों ने भी अपना पावन व्रत पूर्ण किया।

भिवंडी (महाराष्ट्र) : २१ फरवरी को यहाँ पूज्यश्री के

ओजपूर्ण सत्संग-प्रवचन का लाभ लेने हेतु जनसैलाब उमड़ पड़ा था। इस प्रवचन में उपस्थित लोगों ने पूज्यश्री के विशाल हृदय, मानवमात्र के प्रति अपनत्व का अनुभव तो किया ही, साथ ही भारत भूमि के प्रति उनकी आत्मीयता का भी अनुभव किया। उसकी ऑडियो-विडियो कैसेट प्रत्येक राष्ट्रहितेच्छु को अवश्य सुनना-देखना चाहिए।

देश को अपने स्वार्थपूर्ण षड्यंत्रों का शिकार बनाने की दुष्ट इच्छा रखनेवालों की कुचाल का भंडाफोड़ ब्रह्मनिष्ठ बापू ने किया। अपने विशाल हृदय का परिचय देते हुए उन्होंने कहा : **''वास्तव में तुम भी हमारे हो, केवल भारत को खंडित करने की अपनी दुष्ट चाल को छोड़ दो।''**

डोंबीवली (मुंबई) : २२ फरवरी को प्रेमाभक्ति व ज्ञान से ओत-प्रोत अपनी धाराप्रवाह शैली में पूज्य बापू ने यहाँ ज्ञानगंगा बहाई। २३ फरवरी का सत्र विद्यार्थियों के लिए था जिसमें महानता के अनेक सूत्र पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा बताये गये।

गोरेगाँव (मुंबई) : मायानगरी के गोरेगाँव में २४ से २७ फरवरी, चार दिवस तक ज्ञान-भक्ति-योगामृतवर्षा होती रही। पूज्य गुरुदेवश्री ने मायानगरीवासियों को माया में रहते हुए भी माया से पार होने की कुंजियाँ बताईं। इस बार आश्चर्य तो यह रहा कि लाखों आदमी बैठ सकें ऐसी व्यवस्था भी छोटी पड़ने लगी। मायानगरी, चंचलनगरी में अचल भाव से साढ़े तीन-तीन घंटे लगातार सत्संग-प्रवाह चलता रहा।

पूज्य बापू के नजदीक से दर्शन करने के दीवाने ९ के बजाय साढ़ेआठ बजे आकर बैठ जाते थे। ११ बजे के बजाय कभी साढ़े १२ बजे तो कभी एक बजे पूर्णाहुति होती थी, उन प्रेमियों के प्रेमवश।

शाम को ४ बजे शुरू होना है तो पहले ही आकर बैठ जाते थे और ७ बजे तक सत्संग-प्रेमी सराबोर होते रहते थे। पूज्य बापूजी को कहना पड़ता था : 'अब उठो।' सभी के चित्त चंचलता छोड़कर शांत सत्संग-सरिता में सराबोर हो जाते थे। ये १०-२० हजार व्यक्तियों का अनुभव नहीं, लाखों-लाखों मुंबईवासियों का अनुभव बन गया।

अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
२ से ५ मार्च	नासिक	महाशिवरात्रि महोत्सव	सुबह ९ से ११ शाम ४ से ६	डोंगरे वसती गृह मैदान, गंगापुर रोड, जूना नाका, नासिक।	५०४७५५, ५७८७१७, ५७१७८९.
८ से ११ मार्च	बोईसर मुंबई	सत्संग प्रथम दो दिन श्री सुरेशानंदजी द्वारा	सुबह ९ से ११ शाम ४ से ६	खेरा फाटक, रेलवे स्टेशन के पास, बोईसर, ता. पालघर (थाणे).	(०२५२५) ७०७०३, ७२७४०
१० से १२ मार्च	डुंगरा-वापी	सत्संग प्रथम दो दिन श्री वासुदेवानंदजी द्वारा	सुबह १० से १२ दोपहर ३-३० से ५-३०	संत श्री आसारामजी आश्रम, सेलवास रोड, डुंगरा-वापी, ता. पारडी, जि. वलसाड़ (गुज.).	२४४४१
११ से १३ मार्च	भैरवी (गुज.)	सत्संग प्रथम दो दिन श्री सुरेशानंदजी द्वारा	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३ से ५	संत श्री आसारामजी मौन साधना आश्रम, भैरवी, वाया खेरगाम, ता. चीखली, जि. नवसारी (गुज.).	(०२६३४) २०७८५
१३ से १५ मार्च	व्यारा (गुज.)	सत्संग प्रथम दो दिन श्री सुरेशानंदजी द्वारा	सुबह ९ से ११ शाम ३ से ६	शबरी धाम, काकरापार बायपास रोड, व्यारा, जि. सूरत (गुज.).	(०२६२६) २२२९०, २२२०९, २०३०९, २०४२४.
१७ से २० मार्च	सूरत	होली ध्यान योग शिविर	-	संत श्री आसारामजी आश्रम, जहाँगीरपुरा, वरियाव रोड, सूरत।	७६५३४१, ७६७९३६.
२२ मार्च से २५ मार्च (दोपहर तक)	दोंडाईचा (महा.)	सत्संग प्रथम दो दिन श्री सुरेशानंदजी द्वारा	-	-	-
२५ मार्च (शाम) से २६ मार्च (दोपहर तक)	प्रकाशा आश्रम (महा.)	सत्संग	-	संत श्री आसारामजी आश्रम, प्रकाशा, जि. नंदुरबार।	(०२५६५) ४०२७५
२६ और २८ मार्च	मनावर (म. प्र.)	सत्संग २६ मार्च को श्री सुरेशानंदजी द्वारा	-	संत श्री आसारामजी आश्रम, सेमल्दा रोड, मनावर, जि. धार।	३३३००
२९ मार्च	राजपुरा (म. प्र.)	सत्संग	-	-	-
३० मार्च से २ अप्रैल	इन्दौर आश्रम	शिविर जाहिर सत्संग रोज शाम को	-	संत श्री आसारामजी आश्रम, खंडवा रोड, बिलावली तालाब के पास, इन्दौर।	४७८०३१, ४६११९८.
४ से ६ अप्रैल	अमदावाद आश्रम	चेटीचंड शिविर संभवतः पू. श्री नारायण साँई द्वारा	-	संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद।	(०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

पूर्णिमा दर्शन : १९ मार्च २००० सूरत आश्रम।

मानव शरीर के एक्युप्रेशर प्रतिबिम्ब केन्द्र
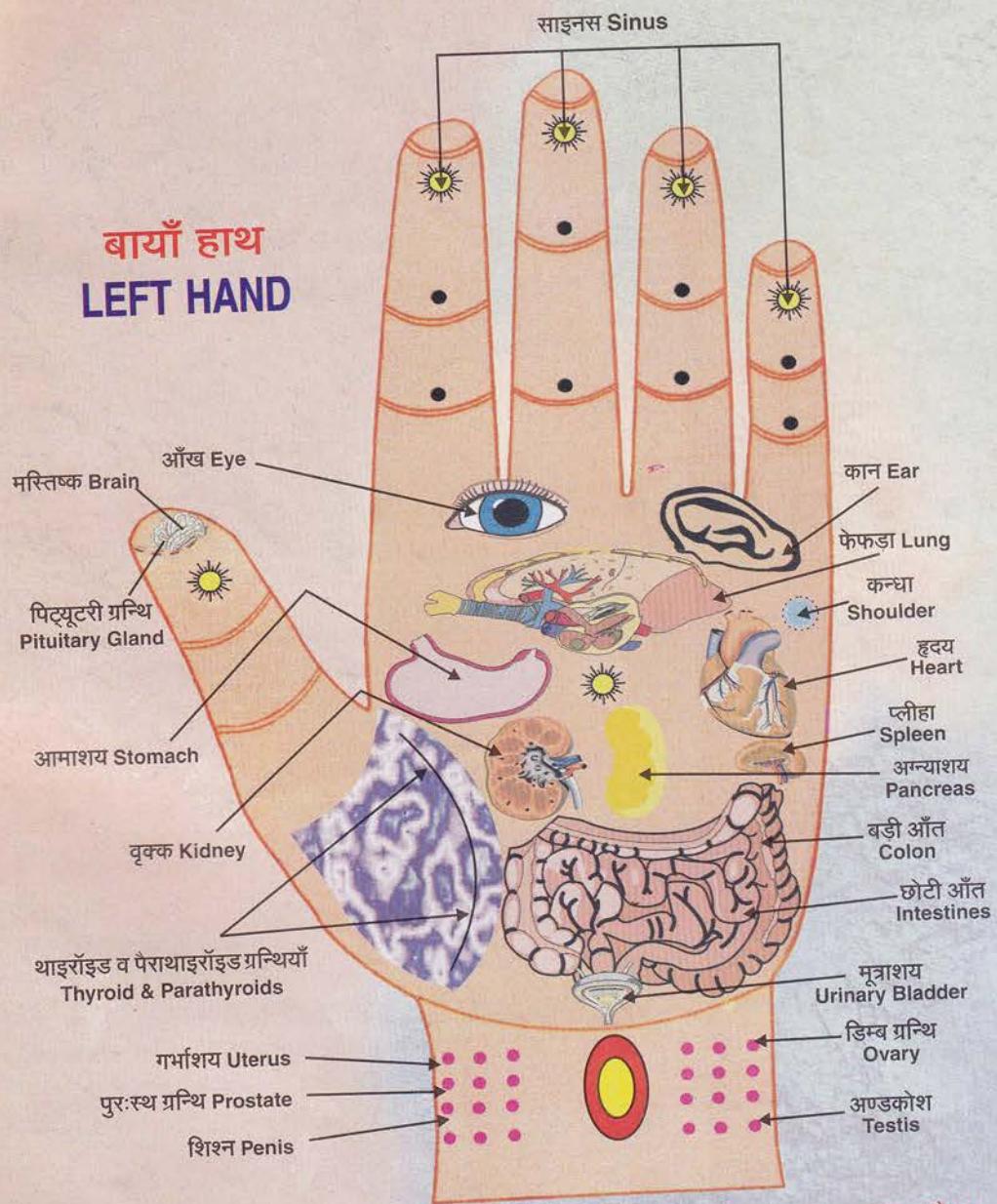
बिन्दु के दबाव के कारण संपूर्ण मानव शरीर में रक्त–संचारण बना रहता है।
एक्युप्रेशर में विभिन्न दबाव–बिन्दुओं के प्रयोग से शरीर की अनेक व्याधियाँ दूर हो जाती हैं।

* इतना ही नहीं, यदि मनुष्य तनावग्रस्त हो, बेहद थका हुआ हो, गंभीर बिमारी एवं दर्द में हो तो इसका प्रयोग एक चमत्कार सिद्ध हुआ है।
* रोगों को बिना दवा के दूर रखने की यह सबसे आसान एवं सरल प्राकृतिक चिकित्सा–पद्धति है। यही वजह है कि आज विश्व के कई देशों ने इसे स्वीकार कर लिया है। चीन में इसे सरकारी मान्यता प्राप्त है, इसलिए इसे 'चायनीज पद्धति' के नाम से भी जानते हैं।

(क्रमशः)

POSTING FROM AHMEDABAD 2-10 OF EVERY MONTH. POSTING FROM MUMBAI 3,9 &15 OF EVERY MONTH. POSTING FROM DELHI 10-11 OF E[illegible] MONTH

DELHI REGD. NO. DL-11513/2000 PSO LIC. NO.-U(C)[illegible]
R.N.I. NO. 48873/91 W.P.P LIC. NO. 207 GAMC/11[illegible]
MUMBAI, BYCULLA PSO LIC. NO. 03 Regd. No. MH/MN[illegible]
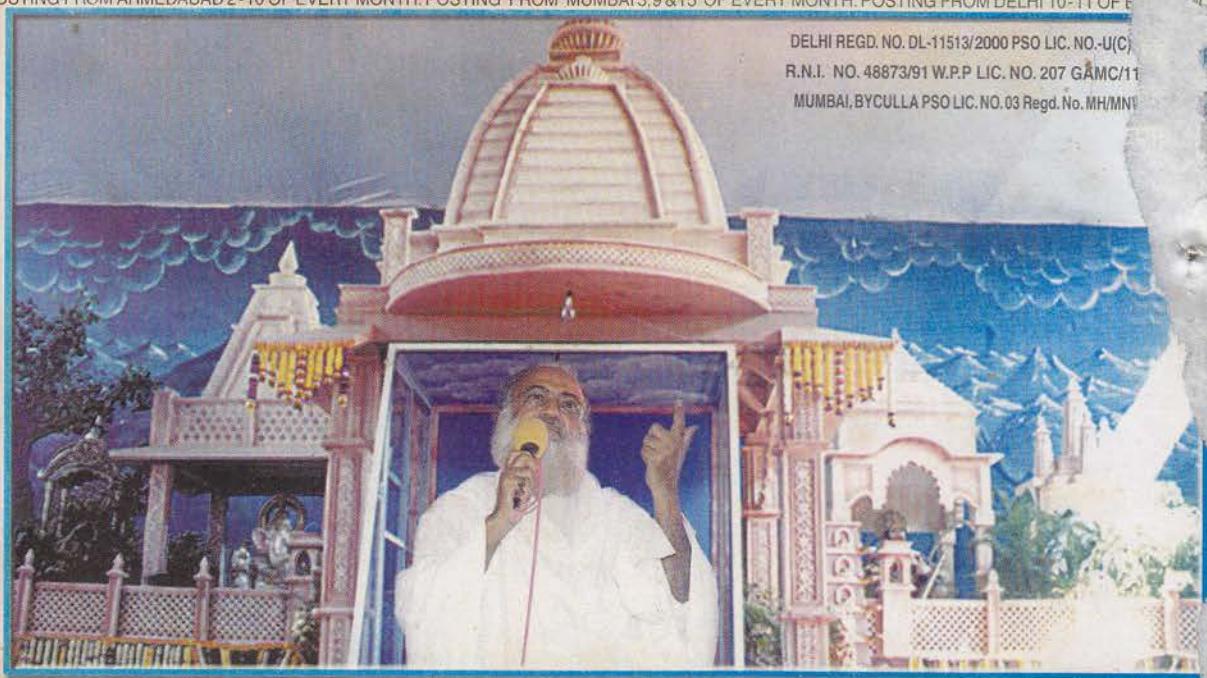
साधु-संगत से तरत हैं, कलियुग में नर-नार । संत-समागम है दुर्लभ, संत मोक्ष के द्वार ।।
गीता भागवत सत्संग में पूज्यश्री एक अनोखी मुद्रा में...

ब्रह्मज्ञानी का दर्शन बड़भागी पावै... मायानगरी मुंबई के गोरेगाँव में आयोजित सत्संग में श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ योगीराज पूज्य बापू के दर्शन करने उमड़ा जनसैलाब... हररोज जिनके दर्शन टी. वी. पर करते हैं ऐसे पूज्यश्री के प्रत्यक्ष दर्शन पाकर मुंबईवासी दीवाने हो गये ।